रत्नपाणिकृता

उषाहरण-नाटिका

अथ मङ्गलश्लोकाः ।—

तत्र प्रथमं विनायकस्य :—

विघ्नं विनिघ्नन्निव जामदग्न्यं प्रचण्डशुण्डाभिषपाणतो यः ।
प्रगृह्य चिक्षेप गृहे स्व धीरेः पायादपायादनपायमूर्तिः ॥१॥

अथ विष्णोः :—

यो वैनतेयमधिरुह्य सुताग्रजाभ्याङ्कृष्णा सहस्रभुजखण्डनमुच्चकार ।
नागावरुद्धगनिरुद्धपरुद्धगद्धा तोऽव्याद्धरि र्धरधरोऽपवलोऽष्टबाहुः ॥२॥

अथ शिवस्य :—

स्वयं भिक्षाचारी वितरणविधौ सर्वनिधिदो
विषादो निर्मृत्यू रविवरसताभोऽपि विरुचिः ।
विरक्तश्चक्रीशो विधुवलितभालोऽप्यतिलक—
श्चरित्रं चित्रं स प्रभवतु मुदे वस्य भवताम् ॥३॥

अथ भानोः :—

वृष्ट्या सृष्टिकरस्सहस्रकिरणश्चक्षुर्जगत्यामसौ
साक्षी रोगहरोऽपरः सुरवरो यस्यारुणः सारथिः ।
सप्ताम्भोधिविलङ्घने पटुतरः कल्पान्तकारी विभु-
र्नित्यं सप्तसुसप्तियुक्तरथयुग्भव्याय भूयादिनः ॥४॥

अथ दुर्गायाः ।—

आविर्भूताऽत्र माया प्रजगहितवधूसंविधाने निकामं
कंसध्वंसैकहेतु विधुकलितपदाकोटरी या बभव ।

याऽऽज्ञा भव्याविदेशप्रलयपरिकरी यादवीयप्रपूज्या
सा भाव्या नव्यभव्या भवविभवकरी शङ्करी शङ्करोतु ॥४॥

अथ श्रीमिथिलेशस्य :—

दयालयो दानिषु कर्णजेता यो यद्रसिंहोऽभवदुग्रचेताः ।
धर्मावतारो धृतनीतिभारः वेदान्तसिद्धान्तगृहीतसारः ॥५॥
तत्पुत्रो नृपतिलकः श्रीमान्महेश्वरसिंह उर्वितलः ।
विलसति यस्य चरित्रं स्वल्पे वयसि यथा हरितः ॥७॥
विनिधाय तदीयाज्ञामुपाहरणनाटिकाम् ।
पूर्वं सर्वमुदमर्वी रत्नपाणिरहं कृती ॥८॥

अथोपाहरणहेतुभूतं पद्यमाह :—

पूर्वं वृत्तमभूदितो हि सुमते तच्छ्रूयतामद्भुतं
भक्त्याराधितशङ्करो बलितरो बाणासुरो भाग्यतः ।
कस्मिंश्चिद्दिवसे सहस्रभुजमुच्छम्भोः सकाशाद्वरं
नाथ प्रार्थितवानितोऽहं बलमुद्योढुं जनो दीयताम् ॥९॥

तदुत्तरं शिववाक्यं पद्येन :—

मत्तोऽभयं भिमयवेत्य गिरिशः प्रोचे बचस्तत्क्षणात्
केतुस्ते हि यदा पतिष्यति तदा बाणासुरास्त्वत्पुरः ।
कण्डूतिस्त्रिजबाहुका सहतरा तस्या निवृत्तिर्भवेत्
संग्रामेहि विजेहि तत्पुरगणं भाव्या न भाव्या गतिः ॥१०॥

अथ नट्योद्योगः । नान्दन्ते सूत्रधारः—'अलमतिविस्तरेण आर्ये । इहागम्यताम्' । प्रविश्य नटी सूत्रधारं प्रति वदति— आज्ञापयतु [आज्ञापयतु] । सूत्रधारः— आदिष्टोऽस्मि, तद्दीयताम्' । तत आह नटी—नटरागे, त्रिकोद्दीपकं मङ्गलगीतं यथा :—

कर डमरु डिमि डिमिक बजावयि, गावयि भूमि पमि गौरिपती ।
भाल बालविधु सन्तत शोभित, तीनि नयन लस तीनि गती ॥

गीत सं०—१

भाल = कपार पर बालचन्द्र सदिखन । यती = यति, संन्यासी । लस =

जय शम्भु यती, जय शम्भु यती ॥
अपरब नाच रचथि जगती ॥ध्रु०॥
गङ्गा जटा बह संग रंग कर चौदिस भू —परेत—पती ।
कटि लस नाग भूति तनु लेपित बसन अजिन उर मुण्डतती ॥
तहिखन सुन्दर पुरुषपुरन्दर, कहुखन उमता शुभद मती ।
सुरमुनि आदि पार नहि पावथि, के नहि जगभरि करए नती ॥
रत्नपाणि मन आनि बसाओल, शम्भुसहित लस पारबती
चारि पदारथ वितरण पारथ, पँ हर हेरथि एक रती ॥१॥

अथार्याः —

जय जय कंसविनाशिनी । जय यादवकुलवासिनी ॥
नत - जन—मङ्गलकारिणी । करुणाकरि अरिवारिणी ॥
अतसीकुसुम - विकासिनी । कामदहन - परिहासिनी ॥
मदनतनय - परिपालिनी । समर सदा जयशालिनी ॥
तुअ माया अनपायिनी । तीनि भुवन गति दायिनी ॥
रत्नपाणि हृदि भाविनी । कर मङ्गल रिपु शासिनी ॥२॥

शोभए । बसन = मृगचर्मक वस्त्र । उर = छाती पर मुण्डक पाँती । पुरुषपुरन्दर = श्रेष्ठपुरुष । उमत = उन्मत्त । नती = प्रणाम ।

गीत सं०—२

नतजन = प्रणत लोक । अतसी = तीसीक फूल । कामदहन = महादेव । मदनतनय = अनिरुद्ध ।

अरिवारिणी = शत्रुनाशिनी । अतसी = तीसीक फूलक सदृश । कामदहन = महादेवक परिहास कर्मनिहारि । मदनतनय = अनिरुद्ध । अनपायिनी = अविनाशिनी ॥

अथात्र नाटिकायां कस्य कस्य प्रवेश इत्याह पद्येन :—

> शम्भोरार्द्धं समूनोः प्रमथगणवतः शैलजायाः प्रवेशः,
> पश्चाद्बाणात्मजाया अतनुतनुभुवश्चित्रलेखाऽभिधायाः ।
> मूनोरम्भोजयोनेरमितबलभुवः साङ्गबाणासुरस्य
> तार्क्ष्यस्याधोऽधकानां हलवलितमनोजातदर्पाक्षरीणाम् ॥११॥

अथ शिवप्रवेशगीतम् :—

विधिवश एक दिन शिव मन भेल । क्रीड़ा करिअ सगण वन गेल ।
प्रथम आदि अनुचर सब सङ्ग । गिरिजा सङ्ग कएल हर रङ्ग ।
कि कहब तसनुक रासक रीति । देव चरित अछि तेहि परतीति ।
सुर मुनि नर पशु सब एक जाति । दम्पति भए रति कर एक भाँति ।
कि कहब तसनुक शिवक विलास । छुटि गेल वन भए गेल कैलास ।
ताहि समय ऊषा मन लाए । पहुँचलि सङ्ग सखी मिलि धाए ।
बाणसुता अनुपम रुचि देह । त्रिभवन सुन्दरि कनकक रेह ।
देखि देखि सबहिक अनुपम केलि । यौवनवश आकुलि भए गेलि ।
काम कल्पतरु मन नहि सुरत । कोन दिन हमर मनोरथ पुरत ।
से बुझि गिरिजा शम्भुक नारि । कहल उषासँ सदय विचारि ।
माधव धवल दोआदशि पाए । सपन अपन पति मिलतहु जाए ।
से सुनि ऊषा हरषमय भेलि । सखीसहित शोणितपुर गेलि ।
गिरिजा गिरिश कएल कत रास । पहुँचल जाए तखन कैलास ।
रत्नपाणि मन पहिल प्रबन्ध । आसु कहब गए कति निब बन्ध ॥३॥

अतः परं किं जातं, तत्र दोहा :—

> बितल बहुत दिन अवधि छह, उपगत माधव मास ।
> आज दोआदशि निशि सपन , गिरिजा पूरब आस ॥१॥

गीत सं०—३

रुचि—कान्ति । कनकक रेह—सोनक रेखा । सदय—एकान्तमे । माधव धवल—वैशाख शुक्ल ।

> तखन [1]सोथविध यामिनी, ऊषा सुतलिह जाए ।
> कोट कामदुति अतिरसिक, केओ जन पहुँचल धाए ॥२॥
> रङ्ग रभस सभ भय विगल, ऊषा उठलि चेहाए ।
> किया सत्य नहि केओ पुरुष, देखल सङ्ग सहाय ॥३॥
> मोहि दूषित कए गेल जन, कि कहब काहि बताए ।
> कोन गति भेटत से रसिक, तादृश रचिअ उपाय ॥४॥
> विरह वेआकुलि अलिक रति, आगर बिछुरल नाहु ।
> परम गुपुत नहि केकत कए, ऊषा पड़लि अथाह ॥५॥
> सुमरि सुमरि पहु सकलगुण, कोकिल—कल—हाँलाप ।
> दए निधि विधि हरिलेल पुनु, अन्तर करपि विलाप ॥६॥
> जत जत अछि परिचारिका, ताहि केओ न सेआनि ।
> कहब काहिसँ सपन गति, के फेरि मिलति [2]सेआनि ॥७॥
> अधिक [3]पुराकृत पुण्यतह, गौरि कएल वरदान ।
> अचल विचल नहि जानि मन, तसु अब करिअ बयान ॥८॥

अथाः परमुषा निर्दोषा दोषाकरमुखी विदुषी विदितरहस्या वयस्याश्चित्रलेखामाहूय स्वाप्निकोद्वन्तसन्तानं हन्ताऽमिषं बभाषे । पटुतरा नटी प्रकटयति तद्वृत्तं सुरगिरा गीतेन गुञ्जरीरागे :—

> जीवनं मम रक्ष रक्ष न चान्यथा विलयामि ।
> कस्समेत्य विधाय सङ्गमिनो गतो हि वदामि ॥
> शिव शिव !! हृता विधिना सा ऽसरणेव ॥ध्रुवम्॥
> दग्धमेव शरीरमिदमवेहि तद्विरहेण ॥
> आलि ! किं मम तं विना सुषमा-समृद्धि-भरेण ॥

१—कोठा । यामिनी—रात्रि । दुति—कान्ति ।

२—सेआनि—सजानी ।

३—पुराकृत—पूर्वक कएल । बयान (विदेशीशब्द)—व्याख्यान, सविस्तर कथन ।

त्वं विपरीतं सृष्टिकृद् वि तल्लिलाशु करेण ।
पट्टके विवृणाविविग्रहमादरेण करेण ॥
वर्तति मनसोह मे रसिको यदा नयनेन ।
न विलोक्य यदामि हेतुना ! नान्यथा नयनेन ॥
दूषितोऽहमनेन चेदिह वेतरं कल्यामि ।
धर्मतो मम रक्षणञ्च यथातथा हि लभामि ॥
किंकरीवत् ते भवामि चरामि शक्तिमरेण ।
तावदेव ममास्तिलं सखि जीवनं रमणेन ॥
त्वं सखीजनतावनाऽसि नता च सर्वजनेन ।
जीवनं मम ते करे सखि किं तदा कथनेन ॥
रत्नपाणिमवेहि तं रसिकं गुणप्रकरेण ।
षोडशाब्दवयोगतं खलु मोहनं परमेण ॥४॥

—अष्टादमिदम् ।

अथोपाऽऽकाशवाक्यं निशम्य चित्रलेखा विशेषादरादाह पद्याभ्याम् :—

तिष्ठन्तु यान्तु वा प्राणास्तत्र कार्यानुरोधतः ।
आज्ञावशाऽवधान्येषो विधि मां किङ्करीमिव ॥१२॥
लिख्यन्ते प्राणिनस्सर्वे मया पट्टेऽनुरूपतः ।
दृश्यन्ते सर्वचिह्नैन तेषु को रतितस्करः ॥१३॥

अथ सर्वेषामवधानाय: । स च भाषागीतेन लिख्यते :—

माधवशुक्ल तीथि द्वादशि चिक, ऊषा से मन लाए ।
गौरी वर-निशि बूझि सौधविच, एकसदि सुतसिह जाए ॥
कोटि-काम-दुति युवा रसिक जन, ऊषा सेजपर आए ।
रजुरभस कत भेल सपन जिव, ऊषा उठलि चेहाए ॥
जागर नागर क्यो नहि देखल, तखन कएल मन खेद ।
काहि कहब तत सपन-चरित जत, किया सत्य नहि भेद ॥

गीत सं० ५—माधव = वैशाख । सौध = कोठा । दुति = चमक । जागर =

असमय समय रमित भए नागर, मोहि दूषित कए गेल ।
काहि कहब हम विरह वेआकुलि, विधि सुख दए हरि लेल ॥
गुपुत कथा हम कहब काहिसँ, कहइत होअ अतिदाह ।
गौरि देल वर गुपुत न राखिअ, बेकत करिअ हम आज ॥
कहल सखि-पति चित्रलेखासँ, जानि सखी निज प्राण ।
विपति अथाह पड़ल देखि मानस, तुअ बिनु के कर त्राण ॥
सुनि सभ चित्रलेखा एहु भाखल कहिअ सखी मन चाह ।
हमर जगतविच आन तरह नहि, केहन देखल धनि नाह ॥
तखन विचारि कहल गाथासुर—तनया जत जत भेल ।
आन तरह नहि बुझब रसिकजन दए विधि विधि हरि लेल ॥
विधितह चरित अधिक तुअ हेरबि, के नहि अग भार जान ।
तीन भुवन जन लिखन सहज तुअ, कर वर पट्ट समान ॥
की हम कहब रहब मूदिनि भए, करब सकल तुअ काज ।
सुरगुरु हमर तोहर कर हेरबि, तकर मोहि नहि लाज ॥
विरह वेआकुल मोर जिव चातक रहए न पल एक थीर ।
तुअ वश हमर रसिक अवलोकन, से मोहि स्वातिक नीर ॥
तहि बिनु विफल हमर सुखमा तनु धन जन राज समाज ।
राजु राजु मोर जीवन हेरबि, पहु दरशन दए आज ॥
सखा विरहसम देखि दयामय, चित्रलेखा भए गेलि ।
कहल उपाय दोष प्राण जनु, होएत फेरि तोहि केलि ॥
आनक अवश एक तुअ वश हम, मूदिनि जानब मोहि ।
लिखब पट्ट हम तोहि देखब पहु, कि कहब सहचरि तोहि ॥
रत्नपाणि भल मन गुनि हे धनि, गौरि कएल वरदान ।
पूरत मनोरथ निश्चय जानब, एहि तरह नहि आन ॥

अगर = पर । नागर = चतुर प्रेमी । लखब = लेख, करबा योग्य । तरह = प्रकार । मूदिनि = सेविका, मनसिया । सुरगुरु = बृहस्पति । विरहवेआकुल = विरहज्वरो वातानल में व्याकुल हमर प्राणरूपी चकवा पक्षी, ई पक्षी स्वाती नक्षत्रक मेघक बूंदसँ तृप्त होइछ, से अल हमरा लेल प्रियदर्शने थिक । सुषमा = परम शोभायुक्त ।

अथ चित्रलेखा पटु लिखेल। भाषया दण्डकच्छन्द :—

लिखल सहिखन चित्रलेखा जगत सबहिक मांझ।
सम नकारल लखन देखल आएल जनमल कंस ॥
देखि यदुवरवंश हरषित तमए कृष्ण अनूप।
सन्हिक बालक कुलक पालक मदनतनु अनुरूप ॥
मदन-बालक लखन देखल कहल मन गुनि, "आलि!
पुरुष-पारख देखि कुमारथ भेलहुँ सभ गुनशालि ॥
हमर मानस हिनक बश भेल तेहन होअ उपाय।
बहुसमागम देखि जागर-समय भीलिअ धाय ॥
हमर मन अलि एहन व्याकुल कहब की सखि तोहि।
आज नहि यदुराज आओत लखन की जग मोहि ॥
तोहर चित्र चरित्र चित्रि तह के न जम भरि आन।
हमर प्राणक त्राण तुअ कर कहब की सखि आन ॥
रत्नपाणि समान यदुवर मिलब निशि मोहि आज।
लखन जानब हमर जीवन सफल सभ मनकाज ॥६॥

अथाहा परमुषाविलापमाकर्ण्य चित्रलेखा वदतिस्म—

"हे सखि प्राणवल्लभे! अवधुक्तमिदमसाध्यं प्रतिभाति। यतः सिन्धुतीरे विनाशो वायोरप्यगम्यायां द्वारकानगर्यां प्रचण्डमार्त्तण्डाखण्डप्रतापो जिताखण्डलो महीमण्डले सपरिवारः श्रीकृष्णो वसति। तत्र मृगेन्द्रमखण्डेऽतिमण्डिते धाम्नि यदुवयस्यै रहस्यादिकं कुर्वन्नभिरुद्धस्तत्रप्या मृत्यादिकमवलोकयन् गोलोक इव विहरति। तत्रावलावलाहं, हे सखि!, कथं गच्छामि।"

इतिश्रुत्वा हताशा बालपुत्री जगाद :—

"हे सखि! त्वमप्येवं वदसि? त्वदन्या का मम सहायभूता? न कापि! तर्हि तव पुरस्तादेवाहं प्राणांस्त्यक्ष्यामि।"

गीतसं०—१

नकराल—'नहि' कहल। मदनतनु—कामदेवक देह सन। त्राण—रक्षा ॥

इत्युपावचो निशम्य सदया चित्रलेखाऽऽह :—

"हे सखि! मा जहीहि प्राणान्। तवार्थमहं व्रजामि। परन्तु मद्वचनं शृणु।"

अथ दोहा :—

तोहर मनोरथ बूझि सखि, गौरि कएल वरदान।
[1]अनल शीत बल अचल भव, एहि तरह नहि आन ॥८॥
न कर मलिन मन हे सखी, सुमरि गौरिपदकञ्ज।
त्वरित समीहित सिद्ध भए, मेटत मानस रञ्ज ॥१०॥
लखन जखन सखि देवगण, पाओल विधिवश खेद।
तखन कृपाकए सङ्कुरी, कएल सकल दुख छेद ॥११॥
जननि-चरण हिअ राखि हम, आएब माधवगेह।
प्राण-त्राण मोहि नहि सुलभ, कारण सखि तुअ नेह ॥१२॥

अथ चित्रलेखोपाविलापमाकर्ण्य भाषागीतेनोत्तरमाह :—

सरथरि तोहर वचन सभ सूनि। [2]क्षुब्ध हमर मन धनि सभ गुनि ॥
सिन्धुतीर अछि माधव भवन। अगणित योजन कठिनहि गमन ॥
जे नहि भए सक तस तुअ चाह। कोन गति मदनतनय तुअ नाह ॥
जगतविदित माधव गुणधाम। सभ गुण भरल द्वारका नाम ॥
रवि विधु पवन हुकुम लए जाए। के थिक आन लाल अकुलाए ॥
रत्नक-पुञ्ज भरल सभ ठाम। बिना हुकुम नहि मानए साम ॥
आठम खण्ड रहथि अभिरुद्ध। हमर गमन थति परम विरुद्ध ॥
हम अबला जाएब कोन भाति। सावधान सभ रह दिन-राति ॥
रत्नपाणि मम होएत उपाय। हिअ धर माधव जगत-सहाय ॥७॥

एतदुत्तरमाह भाषागीतेनोषा। दण्डकच्छन्द—

सखी-भावन मनक ऊपर परम आकुलि भेलि।
जान के मोहि होत तुअ सम वारय की हम केलि ॥

१—अनल—अग्नि शीतल भए जाएत। समीहित—अभीष्ट। रञ्ज—खेद। माधवगेह—कृष्णक घर।

२—क्षुब्ध—क्षुब्ध, आकर्षित। मदनतनय—अनिरुद्ध।

आय गी हम प्राण राखब निश्चय नहि पहु आज ।
दैव-वश्चिम भेलहुँ हे सखि तखन की धनि लाज ॥
दाशलनया प्राण नेखब तेहन निश्चय भेल ।
बुझि ग मन चित्रलेखा वचन प्राणक देल ॥
राखन जनु सखि प्राण तेजहु हमर यावत प्राण ।
गौरि तोहि वर देल सहचरि होएत निश्चय त्राण ॥
सुमरि दुर्गाचरण-सारस भजिअ मानस आए ।
पुरत हे सखि कामना तुअ गौरि भक्त सहाय ॥
देवतासम विपति पड़ि गेल तखन कएल विचार ।
भजिअ सभ मिलि देवि दुर्गा आन नहु परकार ॥
तखन सरसरितीर गएलहु सखि अराधन भेल ।
छुटल सभ दुख मोदमय भए भवन निज सभ गेल ॥
एहि उत्तर चित्रलेखा कएल दुर्गाभक्ति ।
गगनवाणी तखन भए गेल कालसाधनशक्ति ॥
रत्नपाणि विचारि भाखथि सुनिअ देवि विचार ।
सतत दुर्गाचरण सेविअ आन नहि परकार ॥१०॥

अथ चित्रलेखा दुर्गां स्तौति पद्येन :—

जय जयकारिणि भव-भय हारिणि, गिरिश-विहारिणि, शैलसुते ।
महिषासुरमर्दिनि, लक्षितकर्दिनि रक्षयि नर्दिनि घोरसते ॥
निगमागमसारे, मणिमयहारे, महिमापारे, शब्दसुते ।
सफलीकुरु कामं जननि निकामं पदमभिरामं नौमि गते ॥१२॥

अथ स्तुत्यनन्तरमाकाशवाणी बभूव, "वत्स, आर्ये ! कार्यसिद्धिस्ते भविष्यती" —इति निशम्य चित्रलेखा गुप्तवेषा द्वारकामभिचलिता । मनोजवा सा सिन्धुतीरमगमत् । अत्र भाषागीतम्—

चित्रलेखा चललि मन भए गौरि-पद-युग-कञ्ज ।
[1]गुपुतनतु मन-वेग-सम-गति समय लुभ भयभञ्ज ॥

१—गुपुतनतु = गुप्त देह कए । अमरावती = इन्द्रपुरी ।

जाए जाए मणीत सिन्धुक देखल माधव-धाम ।
छरणि जनि अमरावती लस द्वारका जस नाम ॥
सिन्धुतीर सधीर-मानस ठाढ़ नारद-ऋषि ।
सतत भगवत-चरण-सेवक माहि जीवधि भीखि ॥
भाखि बुझि ऋषि आखि कीदहु औतए दर्शन देल ।
कहल के किअ भाखि भेलहिं तेहन घटना भेल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखथि करहु अनु धनि भेद ।
गौरि-वर बिक अबल भव अरि ताहि पड़त न भेद ॥१०॥

अथ कीदृशं नारदं चित्रलेखा दृष्टवती तत्र भाषया गीतम् । वराड़ीरागे :—

[2]यामिनि कामिनि देखल सिन्धु । एकसरि आस केओ नहि बन्धु ।
ततए देखल मुनि नारद-ऋषि । हरि-सेवक जीवधि कर भीखि ।
अजुंनवसन तिलक कएलीन । हरि-पद-ध्यान करथि दिन तीन ।
दीपित देह तपनसम भास । गमन जनिक सम धरनि-अकास ।
सुमनु विभूति कमण्डलु धारि । पाकल केश वयस युगचारि ।
विधिसुत यतिवर गिरिशक बन्धु । सभगुण अनुपम कलहक सिन्धु ।
रत्नपाणि मुनि दर्शन देल । पुरत मनोरथ से मन भेल ॥११॥

तत्र चित्रलेखा दृष्ट्वा मुनिराह—"भद्रे का त्वमेतादृशान्धतमसे उद्विग्नचित्तेव समागताऽसि ?" इति निशम्य सा मुनिं प्रणम्याह,—"जगज्जनीन ! हरि-भावतल्लीन ! देवर्षे ! नारदमुने ! चित्रलेखाभिधाऽहमप्सराऽस्तव किङ्करी भवामि । यदर्थमागतवतीस्मि तद्वदामि"—

अथवोहा—

पुरुब चरित जत भए जिनल मुनिसँ कहल बुझाए ।
मुनि मुनि हरित चरित सभ विरह पड़ल लजाए ॥१३॥

२—यामिनि = रात्रिमें । कामिनि = सुन्दरी । अर्जुनवसन = अर्जुन वस्त्र । तपन = सूर्य । गिरिशक = शिवक ।

अथ मुनिराह दोहा—

कठिन गमन बिच द्वारका समतरु रक्षकवृन्द ।
बिनु परिपञ्च[1] न सञ्चरहु[2] भाविनि पड़बह फन्द ॥ ४॥
पारिजात - तरु - हरण - रण- समय पराजय पाए ।
युगल इन्द्र जग से सबल यदुपति जाहि सहाय ॥१४॥
सम्प्रति बाणासुर सबल गौरीवर - वर पाए ।
हरि - बाणासुर - समर हम भावी देखब आए ॥१५॥

अथाय भाषागीतम्—

एतेक राति अतिअन्ध तमस बिच आइलि छह एहिठाम ।
आकुल - चित तोहर बुझला पड़ थिकिह केम किअ नाम ॥
पुरुष चरित सभ कहल मूनिसँ तखन कहल निज नाम ।
सुभ पद - कमल - युगल अवलोकल आब पुरत मनकाम ॥
सकल कथा सुनि मन गुनि नारद उत्तर कहल बुझाए ।
की बुझि तोह द्वारका चलिहह के तोहि देलक सुझाए ॥
तोहें अबला असहाय तखन फेरि अएबह कृष्णक धाम ।
वायु गमन बिनु हुकुम अतए नहि रक्षक रहु सभठाम ॥
सुरतरुहरण पराजय इन्द्रक तखन सबल के आन ।
तन्हिक आगु बाणासुर के थिक जे पओलक वरदान ॥
नारदवचन सुनल सुनि मन बए तखन कएल बड़ खेद ।
की हम करब कहब की सखिसँ नहि जानल हम भेद ॥
रत्नपाणि मन करिअ समत मन न करिअ आशा - भंग ।
गौरिक वर नहि चलए अगत भवि आगु देखब गए रङ्ग ॥१२॥

अथ नारदं प्रति चित्रलेखा विज्ञप्तिकुलयति भाषागीतेन:—

सुनिअ मुनन भए हे हे गोचर मन लाई ।
सबय - हृदय भए हे हे मुनि होइ सहायी ॥

१—युक्ति । २—प्रवेश करह ।

पुरिअ मनोरथ हे हे शरणागत जानी ।
भअय हृदय भए हे हे जानब सत बानी ॥
कएल चरित हठ हे हे नहि सूझल दोषे ।
करिअ रोष जनु हे हे राखिअ मुनि तोषे ॥
बाणासुर मोहि हे हे मुनि प्राणसमाने ।
करिअ तेहन मति हे हे तसु राखु पराने ॥
माधव - सुत - सत हे हे अनिरुद्ध बखाने ।
करिअ हमर वस हे हे फल जीवक दाने ॥
रत्नपाणि भन हे हे धनिसुनु चित लाई ।
तोहर विनय सुनि हे हे मुनि होएब सहायी ॥१३॥

अथ चित्रलेखा-सविनयगीत श्रुत्वा सकरुणो नारदो गीतमाह भाषया—

सुनु सुनु भाविनि न करिअ खेद । हमर वचन मन मानब वेद ॥
तामसि विद्या लएकह जाह । छूटत तोरित तोहि विपति अथाह ॥
तोहि सभ सूतल जत अग लोक । तोहि नहि देखत न करिअ शोक ॥
तोहर दयावश कहल उपाय । हरि धरि मानस पहुँचह धाए ॥
हरि अनिरुद्ध गुपुत लए आइ । काजसिद्धि धनि जगत सराह ॥
गुपुत रहत नहि परगट आम । हरि बाणासुर - समर निदान ॥
आओब हमहु देखबलनि युद्ध । सुनु धनि जतन लहत अनिरुद्ध ॥
मुनि मुनिवचन कएल परनाम । पहुँचल जाए बीच हरिधाम ॥
आठम खण्ड जतए अनिरुद्ध । रक्षकसँ सभतय अवरुद्ध ॥
ततए देखल गए कतिविध नाच । मुनिहुक धर्म जतय नहि बाँच ॥
कथक आदि सभ गीत अलाप । तन्मय जत छल लोक कलाप ॥
अनुपम देखल रतिसुखधाम[1] । तीनि भवन राजित जसु नाम ॥
कतिविध सखा करए कत हास । ततए कामसुत[2] करए विलास ॥
तेहन अवस्था देखिकहु गेलि । हरि अनिरुद्ध हरखमय भेलि ॥

१—अनिरुद्धक घर । २—अनिरुद्ध ।

आए गगन-पथ रतिसुत-अङ्क । कएल परस्पर कथन निशङ्क ॥
लए गेलि पलहि उषा-रति-गेह । कहल समुझि लिअ पति अति नेह ॥
रत्नपाणि भन कि कहब चरित्र । हरि-करुणा भए गेल अति त्वरित ॥

अथ चित्रलेखा बाणसुता प्रत्याह पद्येन:—

गृहाण रतितस्करं मदन - कोटि - शोभाकरं,
मनोभव - सुतं सुतं कमलभू - मनो - निर्मितम् ।
रसायनमनालसं कवितसाहसं निर्भयं,
विशेहि रतिसङ्करं रहसि माधवे माधवे ॥१४॥

अस्यायमर्थो भाषागीतेन लिख्यते यथा—

मदन-तनय तुअ हरिकहु देल । तामसि विद्याबलसँ भेल ॥
सखि हे समुझि लीअ रति-चोर । साहस सकल भेल सम मोर ॥
देख रतीपति-सत[1] सम रूप । हरि-सुत-सुत[2] धनि जगत अनूप ॥
विधि रचना मानस जनि कएल । सार बनाए पङ्कि छल भएल ॥
सभगुण आगर सागर तोहि । देल विधाता त्रिभुवन जोहि ॥
काम-कलाकोविद तुअ नाह । निर्भय साहसि रस-भर चाह ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज । चलब समारि निबाहब लाज ॥१५॥

अथोपाह पद्यम्—

सन्यासि त्वं वयस्येऽविदितगतितयाऽसाध्यकर्म्मप्रवीणा,
मन्त्राणत्राणकर्त्री हरिसदनमतानङ्गतामुद्गता सा ।
तामस्या विद्यायाऽहोऽगणितहरिहराऽनङ्गपुत्रं कहर्त्री
किं वक्तव्यं तवाग्रे स्वयुपकृतवशा लुक्कदासी सवाहम् ॥१६॥

अस्य भावो भाषागीतेन—

तोहे धन्या धनि त्रिभुवन एक । तुअ करुणातह निश्चल टेक ॥
अविदित-हृदय हरिक गह जाए । हरिसुत सुत हरि आनल साए ॥

१—संकड़ो कामदेवक समान । २— लुक्कक पुत्रक पुत्र ।

सहस एहन करत के आन । हमर बचाओल सहचरि प्राण ॥
तामसिविद्या मुनिसँ पाए । कएल सिद्ध सभ मानस माए ॥
तुअ उपकार कहब कत आज । हम तुअ सुदिनि[3] ताहि नहि व्याज ॥
रत्नपाणि भन तहिखन नेह । न गुनिअ प्राण बाण निज देह ॥१६॥

अथ सर्वा जातसर्वा विदितरहस्या वयस्या बहिरुपगत्य विविशुः । अथ रहसि बाणात्मजोक्तं भाषया गीतमनिरुद्धं प्रति—

कि कहब यादव तोही । दए सुख आदि अन्त निरमोही ।
तुअ विरहानल-दाघे[4] । नीरव दारु[5] अनल तनु तापे ।
विधिवश तुअ पुनु सङ्गे । पुरत मनोरथ शमित अनङ्गे ।
संशय पङ्कल पराये । पहु तोहि देखि देखि भेल मोर नाये ।
रत्नपाणि पहु लाई । विधि रचना फेरि देल गुलाई ॥१७॥

अथोषां प्रत्यनिरुद्धो भाषागीतमाह :—

कि कहब कामिनि आजे । सपन अपन गति कहइत लाजे ॥
न बुझल अन्तरलोने । आगर धनि तुअ भेलहुँ अधीने ॥
जनहिं मानस मोही । असह विरह देल कि कहब तोही ॥
सपन देखल तुअ कोने । एहुखन देखिअ कला अनूपे ॥
आब उचित रति-सारे । करिअ कमल-मुखि प्रेम-पसारे ॥
कए गन्धर्व-विवाहे । पुरओ मनोरथ अपनिअ हारे ॥
रत्नपाणि भन छीरे । रमिअ दुहु मिलि कए मन थीरे ॥१८॥

ततः कामशास्त्रकलाकोविदोऽनिरुद्धो गान्धर्वं विवाहं विधाय सुषमावधिभूतया बाणसुतया रेमे । अथ रतिसमयस्य गीतं भाषया । दण्डकच्छन्दः —

तखन सम्पति वसन फेरल, हार कएलन्हि दूर ।
अङ्ग अङ्ग अनङ्ग सुखमय भेल मानस पूर ॥

३—सुदिनि, पाथिका ।
४—विरहकी आग्निक ज्वाला सँ । ५-सुखाएल काठ जकाँ आगि देहकेँ जरबैछ।

सुरति रति विपरीत कएविध, कएल युग दुगयन्ध ।
अमृत सुखमय भेल तनमय दूइ लोचन अन्ध ॥
तखन देखल सतनु अतितनु कएल मानस चेत ।
मधुर मधु पिबि जानु ताकल फेरि के सुख देत ॥
रतिक सङ्गर भङ्ग कएलन्हि मधुर लाघल बोल ।
तखन विधु-मुखि बिहँसि बाजलि एक्क बोल अमोल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखबि कएल समुचित काज ।
चलब आब समारि दम्पति सभ बचाबए लाज ॥१९॥

अथ रतिसुखानन्तरं मदनतनयो वसन्तवर्णनं भाषागीतेन करोति । यथा—

देख देखु भाविनि सरस वसन्त । बढ़ तसु भाग निअर[1] असु कन्त ॥
[2]परिमल मन्थर मलय समीर । चलए न पाड़ भार गति धीर ॥
कोकिल कलरव पञ्चम राग । उचित समय धनि अति अनुराग ॥
जगमग यामिनि चान विकास । विथिजन दम्पति करए विलास ॥
तरु तरु मधु पिब मधुकर-पुञ्ज । भमए रमए धनि कुसुमित कुञ्ज ॥
देखु सरोवर सारस सोभ । कि कहब देखि होअ त्रिभुवन[3]-लोभ ॥
नागर नागरि समुचित पाए । लाख रमित नहि रसिक अघाए ॥
रत्नपाणि हरि उपगत जाहि । सभ सुख जानब समुचित ताहि ॥२०॥

अथ पुष्पवाटिकां दृष्ट्वा पुनराह गीतं भाषया—

कतहु देखि चमेलि किंशुक बकुल चम्पक शोभही ।
मदन बकहुल कनक पाड़रि ततए रम अलि लोभही ॥
सरल साल तमाल कुंकुम कुमुद लस करवीरही ।
कहब कत हम कुसुम कतविध देखि नहिं रह धीरही ॥
देखु उपवन परम शोभित कोकिला कल गावही ।
चलिअ कामिनि काम कौतुक करिअ मानस भावही ॥

१—निकट । २—सुगन्धि से । ३—रसिक

बहए मारुत मलय-सम्भव कुसुम-सौरभ संगही ।
कुञ्ज गुञ्जत पुञ्ज मधुकर उपजु काम तरंगही ॥
चमक चानक चाननी निस रमए युव-जन भावही ।
[1]मकरकेतुक हेतु त्रिभुवन[2] दीस मानस धावही ॥
देखि तुअ तनु अनुप शोभा धीर नहि रह लाजही ।
रमय सन्त वसन्तऋतुक्ष कतए निबहए लाजही ॥
रत्नपाणि रमेश कामद तखन जीवन सारही ।
हास कए परगाढ़ आनन दूर कए हिअ हारही ॥२१॥

अथ रत्युत्कटेच्छमवेक्ष्य हृच्छयवशादनिरुद्ध प्रति बाणजा तदुत्तरमाह भाषागीतेन—

तोहि हम पाओल विधिवश कन्त । जानब वारम सतत वसन्त ॥
अति नहि चाहिअ पहु सभ काज । धरज धरिअ निबाहिअ लाज ॥
तसु अति तनुक अतनु तनु जोर । तुअ सङ्ग पाए छुटल दुख मोर ॥
त्वरित उचित नहि निधुवन चाह । के अग महित कुसुम सराह ॥
धैरज धरिअ करिअ नहि रोष । दम्पति जानब एक मति तोष ॥
देखिअ जखन नेह असु रीति । तेहन करिअ पुनु निबहए प्रीति ॥
मानिअ मर कहल मन लाए । सदय हृदय भए रहिअ सहाय ॥
रत्नपाणि भन मन अवधारि । करए काज बुध समय विचारि ॥२२॥

अथ निद्रातुराणां यथा न शय्याभूमिविचारस्तथा कामातुराणां न समयविचार इति समीक्ष्य बाणपुत्र्या मानमकारि । तद्विषये दोहा—

रति लोलुप पहु देखिअहु तखन कएल धनि मान ।
[3]आरत लोचन मीन सहि बैसलि विमुखि निदान ॥२७॥
तेहन तरह देखि रति-समय[4] अति आकुल मन भेल ।
[5]दृष्टिकूट-तनु बीत कहि मान-दोष हरि लेल ॥२८॥

१—कामक । २—रति ।
३—लाल । ४—अनिरुद्ध । ५—पूर्वाक्षयवक्त्र जटिल पक्ष, पहेली ।

अथ मानभञ्जनकीर्तनमाह—

उचित तोरित[४] रसवाने ।
असमय समय मान नहि चाहिअ विकल करए पचवाने[५] ॥
[६]विधु कर मधुकर पान यतनपर वए हनु रजनि[७] बिहाने ।
[८]तम अरि ता अरि भवन सुतानन से किअ करहु मलाने ॥
[९]खग पति पति सुत अरि अरि सुन्दरि विधुहित[१०] लोचन राजे ।
[११]हरि हरि, हरि-सुत-तिअ[१२] हिअ मानिनि ताहि न करिअ बेआजे[१३] ॥
[१४]गि.रधर अधर पयोधर भूधर तापर धोतिम हारे ।
जनि धर[१५] शिखर कपरसें लम्बित बिम्बित सुरसरि-धारे[१६] ॥
[१७]गगन गुणित कए आगमवश कए कामिनि कौशल मोरा ।
रत्नपाणि भन सजन उचित कोन गिरि[१८] सम गरुअ निहोरा ॥२३॥

अथ वासनुरागवशादुपा स्वयं गीतमाह—

तेजल मान हम तुअवश रे, न करिअ पहु रोषे ।
प्राण-आन मोहि तुअ कर रे राखिअ परितोषे ॥
कत हम देब अराधल रे, पुरुबिल फल मोही ।
आए तुलायल विधिवश रे पति पाओल तोही ॥
करिअ काज पहु समुचित रे, नहि बाधिअ खेदे ।
हमर कहल हिअ राखब रे, जानब पुनु वेदे ॥

४—त्वरित, झट । ५—कामदेव । ६—हाथ-रहित भ्रमर । ७—रात्रि बिताय भोर कय देल । ८—गाछक शत्रु आगि, तकर शत्रु जल, तकर भवन समुद्र, तकर सुत चन्द्रमा, तत्स्वरूप आनन अर्थात् अपन चन्द्रमुखके । ९—पक्षीक पति गरुड़ तनिक पति विष्णु तनिक सुत कामदेव, तनिक शत्रु महादेव, तनिक स्वयं कामदेव, तत्सदृश सुन्दरी । १०—चन्द्रक समान हितकारी शीतल । ११—हाय हाय । १२—विष्णुक पुत्र कामदेव, तनिक स्त्री रति अर्थात् समागम । १३—लाज । १४—पर्वत रूपी देहक उपरका भागक नीचो, अथवा गिरिधर कृष्ण अर्थात् कारी स्तनक अग्रभाग ताहिसँ नीचो स्तनक गहना । १५—उपरका भाग । १६—गंगाक धार । १७—आकाश अर्थात् शून्य सँ गुणा कए हमर कौशल केँ शून्ये बुझ । १८—पर्वत सन भारी ।

रसमय समय पाए पुनु रे, कए पहु सुखसारे ।
मदन हृदय भए जानब रे, किछु करिअ विचारे ॥
मदन-मनोरथ पूरल रे, शीतल अभिसारे ॥
विधिक चरित-गति के बुझ रे, अत प्रेम-पसारे ॥
रत्नपाणि भन गन गुणि रे, देखिअ हिअ लाई ॥
केहन असम्भव सम्भव रे, विधि देल मिलाई ॥२४॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणासुरपुरे विचित्रचित्रादिमण्डिते कुमारीखण्डे एवानिरुद्धयोः परस्परं रसकथालापकलापं निशम्य रक्षादक्षा रक्षका राक्षसाश्चकितचिता बभूवुः "आश्चर्यमाश्चर्यं कुमार्यपरिचितेन साकमालापकलापमुषा करोति । गगनकुसुममिव प्रतिभाति" । ततो मनसीतिविचिन्त्य सगर्वाः सर्वे ते बाणसमीपमजग्मुः । अथ गत्वा ते तं जगदुः "हे देव ! सुरगर्वखर्वकारकाखण्डप्रताप ! मार्तण्डमूर्ते ! यशोजितराकारमणकीर्ते ! किं वदामो वयम् ! कुमारीखण्डे कोऽपि दुर्बोधया साकमालापं करोतीति निश्चित्य वयमागताः स्मः । यथाज्ञा तथा कुर्मः ।" "रे मूर्ख किं वदयालीकम् ।" "प्रभो ! सत्यमेतत्" । "किमत्र मानम्" । "पुरुषयाणमुमानय ।" "कोऽयमेत्यासाध्यकर्माकरोत् ? भवतु नाम कोऽपि । स आततायी हन्तव्य एव । कोऽत्र विचारः ।" अथेति प्रभोराज्ञां शरीरसीमवगत्य शस्त्रास्त्रधराः सर्वेऽनिरुद्धनिधने कृतनिश्चया अनिरुद्धसमीपमाजग्मुः । ऊचुश्च ते —"कस्त्वमनर्थकारिस्त्रीणामलोऽसि । रे रतिचौर ! गतायुरिव प्रतिभासि । बहिरागच्छ । तव मुखं पश्यामः कीदृशोऽसीति ।" बाणासुररक्षकवचो निशम्य उषाऽनिरुद्धनिपातमेवामन्यत । किञ्च वदतिस्म—"हा हतास्मि । हे विधे ! रंग एव भंगकृत्" इत्युक्त्वाऽनिरुद्धं पद्याभ्यामुपदिशति । प्रथमं यथा—

एकस्त्वं बाल एवाविदितरणगतिः का मतिस्ते बलं वा,
किं शौर्यं वल्लभायाः स्वजनविरहितः किङ्करिष्यस्यनाथः ।
आहूता बाणसूनास्तव निधनपरा भूरि गर्जन्त्यनार्याः,
किं कुर्वे हा हतास्मि त्वदरिचमूमध्ये जीवने जीवनं मे ॥१७॥

किञ्च,

का लज्जा मज्जशय्या किमिह मम सुखं त्वां विना के च लोकाः,
शोकाकाराः समस्तास्तदिह तव पुरस्त्यक्तजीवा भवामि।
कस्तातः का च माता भवति कुलवधूनामये ! देवमेकम्,
स्वामी योनन्दगोप्ता दिशति किल भवे कोपि तेनादृशोऽस्य। ॥१८॥

अथ गीतकम्—

अब मोहि नागर सपन समान। तुअ बिनु जीवन बिपति-निदान॥
अब मोहि उचित अनल परवेश। गहुक आगु निज बदलए बेश॥
हमरहि बाम्हि भेल मन दोष। की हम कहब तखन बिधिरोष॥
कएल गुपुत हम परगट भेल। धैरज हमर सकल दुरि गेल॥
गिरिजा - वरक धाए हम आस। क्षणहि पुरित भेल सकल बिलास॥
की बुझि रावन जिबक भरोस। लाखनि फौज भरल मम रोस॥
रत्नपाणि हरि घर चित लाए। पुरब मनोरथ अपनहि आए ॥२५॥

अथैकतुरमुखो वलि अनिरुद्ध आह पद्याभ्याम्—

कृष्णो देवि पितामहो मम, पिता प्रद्युम्ननामा भवे,
मायावी बलभूत कृताजिनिचयो विख्याततेजोभवः।
कंसाद्या निहताश्च बाल्यसमये वै वा रणेऽनेकसुरा,
देवेशोऽपि जितो हितोऽपि कलहे भू-पारिजातागमे ॥१९॥

किञ्च,

लिहादाप्तजमुर्न सीदति भवे वृष्णे द्विपानां प्रिये।
भेदं मा कुरु यामि सङ्गरभरं नाहं जनः प्राकृतः।
मद्कष्टे समुपागते विधिवशाज्जानीहि तारावती,
नाथप्रीहृदयस्परी गुप्तरी कोऽत्र हि बाणासुरः ॥२०॥

अथानिरुद्धो गीतमप्याह नृपिरोधां प्रति, यथा—

बाणसुता न करिअ मन त्रास। धैरज धरिअ पुरत सभ आस॥

नारद मुनि सुमरब सभ चरित। हरिसों जाए कहब हुनि त्वरित॥
हम गए लड़ब करब मन पूर। [1]आहत भए नहि बिलमए सूर॥
मायायुद्ध बुझल नहि मारि। ताहि कदाचित हमरो हारि॥
बिधिबल तेहन होएत यँ बेरि। कृष्णागमन तखन नहि देरि॥
अबिलहिं कृष्ण करब परकार। निश्चय जानब हमर बिचार॥
माहि मन राखिअ जाएब रङ्ग। त्वरित करब असुरक बल भङ्ग॥
एए बिश्वास चलल अनिरुद्ध। बद्ध गुण देह बहुत अति क्रुद्ध[4]॥
रत्नपाणि मन कृष्णक आस। तखन कहाँ जग एकरो त्रास ॥२६॥

अथ महानाथो भूत्वा गृहीतासिरत्नमिषात् इव निशाचरसमूहयेऽतन् । अत्र दोहा—

कृष्ण-चरण मन शरन कए, बल बिच कएल प्रकाश।
जनि कानन-बिच देवबश, उपजल बलय-हुताश[5] ॥२९॥
देखितहिं[6] रिपुबल चकित-चित, भयसह सकल उदास।
[7]दन्तावल बकसिह जलि, बिचलए बलक हुलास[8] ॥२०॥
[9]एकत कतिबिध उरगगण, गरल बेआपित देह।
[10]बिसतायुत लखि प्राणवश, के न आबि कएल गेह? ॥२१॥
[11]असि-बिद्युत चय चमकि अति, बदमन तनु भए गेल।
[12]गुंडल लोचन असुर-जन, त्रस हास तनु भेल ॥२२॥
एहन पुरुष नहि दृष्टिपथ, अति साहस परमान।
पवन गमन नहि हुकुम बिनु, तएए समागम ज्ञान ॥२३॥
सभ मिलि तसमत की करह, करह सबहु संग्राम।
जनन मरण नहि अपन वश, सोचय ने जग नाम ॥२४॥
एक कहाँ धरि बोलिकहु, पहुँचत गए निजधाम।

१—आहत (निशाचरों) प्रेरा पर वीर बिलम्ब नहि करैत छथि।
२ [illegible] प्रेरा पर [illegible] भय लेल।
३ [illegible] । ४—क्रुद्ध । ५—हुताश । ६ एकत कतेको बिषधर सर्प। ७ [illegible] देखि डरे। ८—तरवारिरूपी बिद्युतराशि चमकि कें। ९ [illegible] मुंह [illegible] भल।

तेहन प्रसोन्थ आनि मन, आज उचित संग्राम ॥२३॥
बहुत मंत्रयन कए अमुर, लाएल सभ मिलि युद्ध ।
बनि हरषित भएसुरगति, समर कएल अनिरुद्ध ॥२४॥

अथ दण्डकच्छन्दः ।—

तखन यदुमणि एहन भए गेल कम्पित—कोप कराल ।
असुर-आल पतंग-सम भए बसए दीप विशाल ॥

सुरि खर तरवारि कर धरि रिपुक अंग समारि ।
काटि छट छट रिपुक मस्तक आनि हुल्ल पुकारि ॥
अंसक खल रिपु खेत जूझल बीनि मल रोट चारि ।
तखन आए पुकार कएलक अपन सबहिक हारि ॥
"कहब की हम बाण भूपति पुरुष रणजिय आज ।
परम सुन्दर जितपुरन्दर[1] वीर कर असि[2] छाज ॥
बाणहि रण जिय असुर जखल आहि भेल न देरि ।
पुरुष एक अनेक अति भए काल असुरक हेरि" ॥
दूत-वाचिक सुनि भूपति क्रोध-कम्पित भेल ।
अपन साज समाज साजित रङ्ग-भूमि[3] चल गेल ॥
आए नारद गगनपथ-गति देखए कयो नहि आन ।
मदनसुत एक ऊषि देखथि करथि आशिपदान ॥
बाणभूपति सङ्ग बहुनय रङ्ग जूझल देखि ।
ज्ञानमान विमानसँ नृप कहल वृत्त विशेषि ॥
विबुध दानव दैत्य मानव कोम यक्षक बीक ।
रक्षपति विचारि देखिअ अप-रक्षक नीक ॥२७॥

अथ छन्दोऽन्तरेण बाणोक्तं गीतम्—

चौदिश रक्षक मानव यक्षक कोटि काटि रणवीर ।
बाण हुङ्कम बिनु बहथि न कहलन जे तुनु गन्धर्व समीर ॥

१—इन्द्रहु के जितनिहार । २—तरवारि । ३—युद्ध भूमि । ४—ज्ञानी कायस्थ, श्रीमान् (श्रीसचिव) देवानजी ।

[4]परिखा तेहन अलङ्घि-सम चौदिश चौदिश वन्ह हुताश[5] ।
आनि सबए नहि सकल सुरासुर सब जन मानथि त्रास ।
ततए आनि लगया दूषित कए पङ्कजल खङ्गर बीच ।
कतेक अमृरथ कए साहसमय ठाढ़ रुधिरमय कीच ॥
पाहिअ एहन नपति-दल अनिरुद्ध देखि असह अपराध ।
तखन एहन दुर्जन नहि राखिअ दिन दिन दोष अगाध ॥
तखन फेरि रण भेल बहुत बिस नहि थाकथि यदुवीर ।
बाण असुर मन भेल बेआकुल नहि रह मानस धीर ॥

देखि विमान कहल "सुनिअ नृप कह माया-संग्राम ।
तखन पराजित होएत वीर पुनु पूरत मानस-काम" ॥
कहल विमान सुनल बाणासुर अन्तरहित[6] भए गेल ।
नागफास लए यदुपति बान्धल तखन अचल भए गेल ॥
हरषित भेल तखन बाणासुर बहुल हाथ तरुआरि ।
मधए चलल रतिपति सुत[7] तहिखन हटल विमान विचारि ॥
"करिअ विचार बीक कोन बंशक निश्चय कए सभ बूझि ।
तेहन उचित नृप तेहन करब पुनु हमरा बड़दल सूझि" ॥
समुचित कथा नृपक मन आएल दए रक्षक चौबीस ।
ऊषा चरित चकित-मन झाखथि व्याकुल मन अति रीस ॥
ऊषा सुखाइलि तड़ित रेह-तनु[8] धुक धुक भीतर प्राण ।
निज-पति बनि देखि परम बेआकुल हरि बिनु के कर त्राण ॥
एहन तरह देखि नचकित नारद मानस कएल विचार ।
जाए द्वारका कृष्ण बुलाओब होएत तखन परकार ॥
नारद कहल तखन रतिनन्दन न करिअ मानस खेद ।
आए कृष्ण युद्ध फेरब तहिखन नाहि पड़त नहि भेद ॥२८॥

★ ★ ★ ★

४—महलक चारि भरक विशाल सत्ता । ५—आगि ।
१—अदृश्य । २—अनिरुद्ध । ३—त्रिलोकक रेखाक समान देहवाली ।

अथानिरुद्धापहरणं यदा जातं तदा द्वारकायां किमभवदित्याह तटस्थ भाषागीतम् :—

तखन द्वारका भए गेल सोर । रतिपतिसुतके हरलक चोर ॥
देवकि रुकुमिनि रतिक विलाप । सुनि कहु ककर हृदय नहि काँप ॥
के मोर हरलक आन चकोर । तोनि भुवन हरिसँ के जोर ॥
सभ कह सभ मिलि तेजब प्राण । पाओल रतिसुत तेहि पए बाण ॥
तखन कृष्ण मिलि सभ परिवार । एकत भए कहु कएल विचार ॥
के जग कंस हमर अति मन्द । ककर छोड़ाओल अछि नहि फन्द ॥
सुर सुरपति नर जत अछ लोक । हमर दुःख ककरा नहि शोक ॥
सभ यादव मिलि कएल विचार । के हरलक रतिपतिक कुमार ॥
जकर तकर सभ कहलक नाम । कृष्ण सकारल एकहि ठाम ॥
तखन कृष्ण निज कहल विचार । सुनिअ सबहु हरलक उपचार ॥
क्यो कुलटा निज तकरे काज । अछ मन एकहुक नहि जनु लाज ॥
हमर कहल राखब मन लाए । क्यो मुनि गेल कहलक पए जाए ॥
कोजि पठाविअ जनु सभ दीस । पुरब अलोरय श्रोजगदीश ॥
कृष्ण कथा सुनि यादववृन्द । साञ्चल मोन भेल मतिमन्द ॥
कृष्ण सभ त्रिय शोभथि तेहन । [3]चन्द्रकृष्ण मध्य कलानिधि जेहन ॥
[4]कृष्णानन सबहिक दृग कोर । तेहन शोभ जनि चाम चकोर ॥

अथैतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णसभायां यादवमण्डलीमण्डितायां कलिविशारदो नारदो "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे" इति षोडशनामानि प्रजपन्नुपसमागमत् । ततः सर्वे यादवा उत्थाय मुनिन्तं प्रणेमुः । ततः स सकृष्णानपि यादवान्नारीभिरभिवृतं वरासन उपविवेश । तत "हे कृष्ण कुशलमसीति ?" मुनिराह । "सर्वमादि त्युत्तरम् । हे कृष्ण सर्वे यादवा उत्कण्ठितचिता एव दृश्यन्ते । किमत्र कारणमिति" मां मुनिर्भवान् । तदनीं कृष्ण आह "मुने गतायामिति

४ तारागणक दीन चन्द्रमा । ५ - कृष्णक मुख सभक आँखिक कोर मे छल ।

अनिरुद्धापहरणमभूदिति केनापहृत इति वयं सर्वे न विद्मः । च सर्वज्ञ मि, कदाचिन्नारदवन्मयं द्वारकानिवासिनं मन्ये" । ततो मुनिरट्टहासं कृत्वा कृष्णमाह — "हे जगन्निवास ! मयापि सर्वज्ञोऽहमिति तर्हि प्रतारयसि । तथापि वृत्तान्तमिदमहं जानामि तद्वदामि ।" ततश्चाकरान्वाग्मसुरवरदानमनपेक्षीकृत्यानिरुद्धनागपाशबन्धनपर्यन्तमशेषवृत्तमभाषत ।

अथ भाषागीतम् -

तखन कृष्णमन उपजल क्रोध । प्रलयानलक [illegible] के रोध ॥
देल हुकुम कह चल चतुरङ्ग । शोणितपुर भए लागल रङ्ग ॥
बाणासुरक [illegible] मद भङ्ग । कहो पुरुषमे कएलक [6]जङ्ग ॥
होअओ तयारी न कर विलम्ब । रतिसुतकेँ नहि क्यो अवलम्ब ॥
नागपाश बान्हल छथि बाल । [7]मानस मानस एक मराल ॥
होइछ एहन मन एकसर जाए । बाणासुर-भुज काटिअ धाए ॥
कृष्णक [illegible] [8]सुनि । नारद कहल तखन मन गुनि ॥
सुनिअ कृष्ण हमर निज कहल । तखन तयारी कहबा रहल ॥३०॥

अथ पद्यं नाह नारदः

कृष्ण ! त्वं गच्छ गच्छ क्षणमपि न भवेद् गौणकीर्ते ! विलम्बो
नस्तारं रक्ष रक्ष क्षणमपि यदुमणे ! दक्षरक्षाचकोसि ।
[illegible] विबुधरिपु घोर बाणासुरो य-
स्तत्पुत्री पुण्यपात्री विलपति यदहं नेतुमत्रागतस्त्वाम् ॥२१॥

तदनन्तरं कृष्ण उवाच-

गच्छत्वग्रे च सेना सपरिकरतरा यादवास्ते सुसज्जा,
गत्वा पश्यन्तु सर्वे समरभुवि मुने मद्भुजानां विलासः ।
[illegible] कृष्णे [illegible] बाणनाम्नो
यो वा शक्त्या सहायस्तमपि कृतकलिं कोपितं मोचयामि । २२॥

६ - [illegible] । ७ - हमर मन रूपी मानस सरोवरक हेतु हंस ।
८ - [illegible] ।

एतदुत्तरे नारदः पुनराह —

तेनायाः सा न गम्या दिशि विदिशि बहिस्तस्थतो जातवेदः
सम्पारे कोऽपि गन्ता भवति न सहसा या पुरी शोणिताक्षी ।
प्रक्षुब्धं पूर्वजलधि स्वयमपि गरुड़ तत्समाकृष्य नीत्वा,
गम्यस्थं बाणगेहे कलितबलभुजः कोऽप्यमूर्तोऽस्तिकीर्त्ते ॥२३॥

कृष्णमाह खगपतिः

स्मृते खगेशोऽहि समागमस्तदा स्तुत्वा हरिन्नाम नताम दण्डवत् ।
उवाच हे कृष्ण करोमि किं यथा तथा बदाज्ञामिह लक्षयामि ते ॥२४॥

तत कृष्ण आह

कथासोऽस्मि हेमित्र विचित्रनामित सुदर्शनस्याथ तथैव विक्रमात् ।
चलामु बाणासुरगर्वखर्वनविधानहेतो विलतासुनाधुना ॥२५॥

सत्र खगन्द्रावलम्बनाद्गरुडया उपेन्द्रबलदया जातवेद गर्भोव जग । तत
किञ्चाकर्णदित्यन्तरिक्षतो नारद आह यथेम :—

प्राकारं वीक्ष्य बाहुरनिबिडतर त्रासपन्न ज्वलन्त,
गोलोकाधोगतस्त क्षुभित इह पर तत्कथ मामि चेतः ।
ध्यात्वा गत्वा च नीत्वा कलितभवन तत्पुष्करीधन्य गाङ्गम्
व्यादायास्यं कृतार्थो व्यथितुमिति तदाक्षाय कृत्वा रवीन्द्र ॥२६॥

ततः कृतप्राकारनिकरया वैनतेय राक्षणपरा कृष्णसकर्षणाद्यमदेवा असुर-
देवपुरीपरिसरवयम् । तत बाणपुर अवा. कृष्णादीन समीक्ष्य सत्रावा
वदन्तिस्म । "क भवन्तो गरुडाकर ? अत्र मा गच्छत" इत्युक्त्वा बहवा
दूता बाणसमीपमाय जगदु । "हे देवदेव नागपाशबन्धस्थानयकारिण-
हगहायनार्थमेव गरुडाकर्षणसो जना समाकर्षन्ति तद्विषये यथाज्ञा मे
तथा वय कुर्म ।" रे रक्षका मद्ज्ञा विना समागतान्येतान् साध्यकर्माणकते
हुनस्या एव । कोऽत्र विचार ?' इति निशम्य रक्षकास्ते कृष्णादिभि-
र्योद्धुं कलहुधा समागताः । अत्र दोहा :—

हुकुम पाए सभ धाएकहु, कए सेना चतुरंग ।
अस्त्र अस्त्र गहि लक्ष बाह आरम्भ कएलक जग[1] ॥२७॥
[2]कृष्ण-सदर्शन दहन-बिच पड़िगेल असुर-पतग ।
हलधर-हल कुन ताड़ना कएलक अग नहि भंग ॥२८॥
[3]राम समर अनानि जनि, भएए असुर रण बीच ।
[4]बिलवाय रण दुरित रिपु रथन रथम मीच ॥२९॥
कि कहब [5]नागपुरु धीति हम कृष्ण-आदि जन चारि ।
[6]लेला हरीपत समर बिच लक्ष रक्ष रिपु मारि ॥३०॥
किछु बोधल से समर जन, बाणासुर तट जाए ।
सुनि चरित सब जगिन मन देल हुकुम अकुलाए ॥३१॥
[7]रथन तथा ि [illegible] रिपु [illegible] रथ जाए ।
[8]सायुध सरीरवार मिलि, रण भूमि पहुंचल आए ॥३२॥
कहल कृष्णसँ कोप कए बाणासुर असिधुर ।
[9]भुज कण्डुति मम दूरि कएँ, करह मनोरथ पूर ॥३३॥
के नहि जानए हमर, तीनि भुवन परधान ।
तपर शम्भु सहायता, के बल हमर समान ॥३४॥

इति बाणासुरगर्वोक्तिं निशम्य वामदेव आह—

अपन प्रशंसा उचित नहि, गुण बुझ आन सराह ।
विश्वकार कह हमहि विधि, से जग सुलभ अथाह ॥३५॥
[10]तीन लोक बल हेतु नहि सत्ता बलक निदान ।
[11]सकल बासन साधना समय चरित जग जान ॥३६॥
[illegible] रिपु [illegible] लक्षगह [illegible] सिंह समाए ।
[illegible] मुद्रा खाए ॥३७

---

१ गद [illegible] आनिल बीच मे अगरुडी फनिगा [illegible] २ बामदेव [illegible] समान । ४ [illegible] नहसँ [illegible] ५ [illegible] उपेक्षा पूर्वक । ६ -विरोचनक पौत्र बाणासुर [illegible]

राम तनुक अति एक पुनु, आए हनल बजरोल ।
तोहर[1] पितामह हुतल हम, नरहरि तनु जगदीस ॥३९॥
तोहर गर्व्व हम खर्व्व कए, काटब दस-माथ बाहु ।
प्रगट होएत सभ लोक मिच, जनि विधु ग्रासए राहु ॥३९॥
पुरब कएल हम विबुध मिलि, देवासुर-संग्राम ।
सकल असुर-जन मारि पुनु, पुरल इन्द्र मन काम ॥४०॥
तुअ भुज-कण्डति शमन कए, तखन बजाओल नाम ।
अब किअ करह विलम्ब रण, बाणासुर निज धाम ॥४१॥

इति कृष्णोक्तमवगम्याऽ 'सुरारिरयमिति' मनसि बुद्ध्वा जनिष्णुरो जननमरणे नियते एव नहि विष्णुद्वारा हन्यतेऽहङ्कारमेव मध्ये । का चिन्ता मरणे रण इत्यस्याज्ञाकी भनिरतो रणाभिलाषमेव निरस्यमेव ततो युद्धाभ्यारम्भकरोत् ।

अथ छन्दोत्तर भाषा :—

साजि गज रथ बाजि भूधर विविध आयुध सङ्ग ।
कहब की हम रङ्ग रचना व्यूह कलिबिध भङ्ग ॥
असि कराल विशाल चमकए, शक्ति-पट्टिश-जाल ।
पाश मुद्गर भास चौविस चापधर कए व्याल ॥
युद्ध सभ विध ज.ए लाओल, कहब की तसु भेद ।
बाण प्राचक भास ताकवि, करवि मन बहु खेद ॥
कृष्ण-कर वर चक्र चमकए, देखि नहि सक लोक ।
अन्ध बन्ध कबन्ध उठल, भेल रिपु दल शोक ॥
तेजि प्राण कृपाण अश्व-भय, गहल बहुविध चाप ।
बरिस शर जनि वारि वारिद, करए गर्ज्ज-कलाप ॥
आज धरि नहि हमर सङ्कर, भेल दोसर ठाढ़ ।
आज यादव तोहि पराभव, होएत मोहि सह गाढ़ ॥

१—बुद्ध प्रपितामह हिरण्यकशिपु । बामक पिता बलि, तनिक विरोचन तनिक प्रह्लाद ओ तनिक हिरण्यकशिपु ।

सुनि यदुमणि कुपित-मानस, रचल आयुध ढेर ।
युद्ध बलिसुत रुद्ध भए गेल, विकल मानस भेर ॥
मारि हारि विचारि बलिसुत, गेल शंकर पास ।
कहल निज दुख बाहि कर-पुट, पुरिअ भगतक आस ॥
तखन हँसिकहु कहल शंकर, "बाहु-कण्डूति तोहि ।
छूटल, निज घर आए बैसह, कहह की कवि मोहि" ॥
"देव तुअ पद शरण सेवल, क्षमिअ सत अपराध ।
करिअ आए सहायता मम, हरिअ दुःख अगाध" ॥
भगतवश शिव आजि[1] पहुँचल, प्रमथ-गण सङ्ग लाए ।
कृष्ण देखि विशेष हरषित, शम्भु बाण-सहाय ॥११॥

कृष्ण आह शिव प्रति

बाण सुर-अरि विदित शंकर तकर कारण आज ।
तखन मोहि तोहि युद्ध संभव, तकर होइछ लाज ॥

उत्तर शिव आह :—

भक्त-वश हम जगत जानए, सुनिअ यादव-राज ।
कहल से फेरि जतन फेरब, तखन की जिव काज ॥
तखन बलिसुत सबल भएकहु, फेरि लाओल जंग ।
तखन सभ मन शंभु सचकित, किदहुँ आबिन्तरंग ॥
समर-निर्द्दय सबय हुनि भए, चक्र कएलकराल ।
असुर-बल-विध जाए फेरल, शमित-सुर-रिपु-जाल ॥
तखन हलधर मदन खगपति, कएल कोप-विकाल ।
कतेक बालक फौजि जुझल, कुञ्ज-पुञ्ज हुताश ॥
देखि हारि विचारि सिरजल, शम्भु ज्वर विकराल ।
जाए हलधर-तनु समाएल, उठए हिम अतिजाल ।
तखन हरिसँ कहल हलधर, उठए तनु अति दाह ।
कहब की हम अवश भेलहुँ [illegible] नाम गराह ॥

१ युद्ध सभाग्र मे

हरिअ तनु जर जाए बहु चल तसए कएलक कोप ।
तखन हरि-मन एहन भए गेल, करिअ हर-जर कोप ॥
तकर कारण हरि विचारल, करिअ किम परकार ।
हमहु सिरजिअ तेहन जर भए, असह अति विकरार ॥
तखन सिरजल सौरि[1] निज जर, हन्त अन्त हुताश ।
अपन सहहक जर निकासल, शंभु जर हत आस ॥
निरखि हर-जर धाए सविनय, शरण हरि-पद आए ।
करए लागल बहुत गोचर, माथ लीअ बचाए ॥
सदय भए हरि सुनि विनती, गिरिश-जर-भर काटि ।
तखन माधव भाग कए पुनु, देल जगभरि बाँटि ॥
हरिक सिरजल जर पराभव सकय के जग आन ।
सदय भए हरि मन विचारल देखि रूप भयान ॥
समह निज जर असह बाग भरि, सहल के तुअ घाह ।
हमर तनुवल अन्त बुझिअहु तखन पर-तनु जाह ॥
तखन जर हरि तनु समाएल, भेल शीतल लोक ।
[2]शौरपालि, [3]रतीश, [4]विनतासनम[5] भेल अशोक ॥
६ सभ भए गेल तखन शिव बल बाण लाघल जोग ।
कएल थकि सक हरिक सरहुति, शमित कोप उरग ॥३२॥

जखन बलिसुत भेल निर्ज्जित, [6]गिरिश कौ भेल रोष ।
कएल शंकर रण-तयारी, हरिक नहि किछु दोष ॥
तखन हरि-हर जगत-दुर्द्धर, द्वन्द्व-युद्ध पसार ।
बुझए नहि दिन राति सञ्जर, अस्त्रजाल अंधार ॥
हरक शर भेल उरग विषधर, चलल माधव-तीर ।
तखन हरि-शर गरुड़ भए कहु हरल हर-शर-भीर ॥
गिरिशशर भए गजक आकृति, चलल गिरिधर-बाण ।
तखन हरि-शर सिंह तनु भए, हरल शिव-शर-आन ॥

१ सूरण । २—बलराम । ३ कामदेव । ४ गरुड़ । ५ महादेव के ।

गिरिश-बाण विषोल्बिका भए, पड़त यदुमणि-अङ्ग ।
हरिक बाण मयूर-तनु भए, कएल हर-शर भङ्ग ॥
कहब कत हम शरक रचना, रचल शम्भु अनन्त ।
भेल हर-शर सभ निरन्तर बूझि विष-शर अन्त ॥
हर तमोमय समर—निर्दय, लेल आयुध शूल ।
कएल हरि कर चक्र-धारण दुहु जगतक मूल ॥
उधाल-जाल कराल देखि सभ, आलि लेलक झाँपि ।
खसल रवि विधु तारकागण, धरणि उठलिह काँपि ॥
समहु देव विचार कए मन, पहल विधिसँ जाए ।
"बाण कारण परम विग्रह[7] कए अनुग्रह[8] धाए ॥
एकसँ भए तीनि विग्रह[9], जानि काजक भेद ।
एकर विस्मृति, सखन की अग ? देब राखिअ भेद" ॥
अस्त्र युग नहि मोघ[10] एकहुक, बूझि कज्जज[11] आए ।
तखन कए विधि उचित मोचन, रहल बैसल जाए ॥
भिन्नहुँ एक अनेक विग्रह[12], तीनि तरहक काज ।
करिअ ध्यान विधान मानस, सखन उपगत लाज ॥
हरिहरस्तुति सुनि शंकर देखि आयुध—जाल ।
कहब किछु हम सुनिअ माधव बाण जानब बाल ॥
फेरि हरिसँ कहल शंकर बाण दुह मुख राखि ।
हमर वरतह असुर-रक्षण भेल देखब आँखि ॥
जखन शंकर दूर उपगत कज्जजू[13] निज गेह ।
शूल चक्र समेटि राखल हर्षलोक विदेह ॥३३॥
तखन हरि फेरि रङ्ग उपगत हुलसि बलिसुत देखि ।
कएल युद्ध समग्र क्षण क्षण सम्भ्रम-दम्भ विशेषि ॥
हरिक मन अति क्रोध उपजल सिरजि अस्त्रक जाल ।
आए छारल बलिक सुत-बल भेल बाण बेहाल ॥

१—युद्ध । २—कृपा । ३—देह । ४—व्यर्थ । ५ ब्रह्मा । ६—देह ।
७ बहु ।

भेल अन्तरहीन[1] बलिसुत कएल मायिक युद्ध ।
ओसहु हरि-सर जाए छाएल सकल तनु अवरुद्ध ॥
तखन बलिसुत भेल व्याकुल कोपमय रण आए ।
करए छाएल रङ्ग कलिविध चित्त शस्त्र सहाय ॥
तखन हरि अति कोपमय भए चक्र गएलन्हि हाथ ।
देखि बलिसुत भेल हतप्रभ कहल गिरिजा-नाथ ॥
"तोहि तेजि नहि शरण दोसर भेल अवोसर[2] फेरि ।
करिअ भक्त-सहायता हर उचित नाहि न देरि" ॥
'सुनहु बलिसुत करब हम नहि आय हरि सँ रङ्ग ।
हमहि हरि तनु दुइ जानह, काट के निज अङ्ग ॥
हमर आब सहायता नहि आह निज बल पाए ।
अपन दोष विचारि देखह करब की हम आए' ॥
तखन बलिसुत ताकि पहुँचल रङ्गभूमि समीप ।
देखि हरि-तनु तेहन भए गेल भानु तट जानि दीप ॥
बाण-बाण विचारि माधव चक्र देलन्हि राखि ।
अङ्ग-भूति कए बाण देलन्हि कोप-पूरित आँखि ॥
बाण दिसि हरि हेरि भाखल "बचए तुअ बल गेल ।
करिअ साकल निज मनोरथ तकर अवसर भेल" ॥
सुनल बलिसुत हरिक भाखल नयन उपजल रोष ।
फेरि हरिसँ रङ्ग लागल अस्त्र नहि भरि कोष ॥
द्वन्द्व सङ्कर होमए लागल चकित लखि सभ लोक ।
कहए लागल किछु भावी करए लागल शोक ॥
नयन कर नहि चाप शर-भर कएल यदुमणि रङ्ग ।
बारक तर बलि-बाण छोलथि देखि निज बल भङ्ग ॥
तेहन बालक तरह देखिकहु भेल पश्चात्[10] क्रुद्ध ।
धाए आए सहाय बालक करए लागल युद्ध ॥३४॥

१—अवृद्ध । २—अवसर ।
१०—कार्त्तिकेय ।

प्रथम बलिसुत[1] रङ्गक आरम्भ युद्ध बाहुन द्वन्द्व[2] ।
गुरुड़-पक्ष नखाम्बुधाकुल भेल शिखि अति मन्द ॥
तेहन देखि विशेषि हरसुत लेल आयुधपुञ्ज ।
गरुड़ ऊपर कतेक फेरल करए चाहथि लुञ्ज[3] ॥
तेहन यदुपति तरह देखल बहुत मन भेल कोप ।
"तारकारि-मयूर आकुल भेल के कर लोप ॥
जखन हर सुत बड़ भेलाकुल अपन देखल हारि ।
शक्ति कर गहि गर्जा कएलन्हि अस्त्र देलन्हि टारि ॥
तखन काल कराल-सम कर चक्र लेल मुरारि ।
भेल सभ विश्व परम क्षोभित सकल लोक विचारि ॥
कहल यदुमणि "सुनहु षण्मुख करह निज परकार ।
काटि तुअ कर शक्ति काटब तोहि चक्र क धार" ॥
तेहन अवसर बूझि भगवति तेजि अम्बर[4] आए ।
कृष्ण सम्मुख ठाढ़ि भेलिह लाज देल बहाए ॥
"कृष्ण कृष्ण दयामयाशय हमर राखिअ तोष ।
करिअ बाल गोहारि माधव क्षमिअ जत सुत दोष" ॥
तेहन तनु लखि झाँपि दृग हरि कएल सुत जिव-दान ।
बाण कारण बेर सिरजथि तेहन देखि मेलान ॥
तखन निज सुत सङ्ग लए कहु देखि बेलिह गेह ।
बाण प्राण बचाए हरिसँ समर दुइ भुज देह ॥
एहि उत्तर बाण सेना रहल जे चतुरङ्ग ।
धाए धाए मुरारि सभ मिलि कएल सबहिक भङ्ग ॥
रहल नहि बल शोल अवबल पुरुष बर पछताय ।
हरि सुदर्शन जखन फेरब करब की हम आय ॥

२ दुहुर बाहुन मेघ युद्ध । ३ गरुडक नखरूपी अस्त्रक द्वारा व्याकुल मयूर ।
४ लोचन । ५ तारकासुरक शत्रु मयूर विकल भेल ओकर रक्षा के करत ?
६ अस्त्र ।

अनेक गण-मुख्य सबहु गरिन छ हूँ की मति भोर ।
जाए शम्भु रिसाए सब विधि लखन को वर लेल ॥
तकर अवसर आए हूँ चल करत ने अब त्राण ।
हरिक क्रोध निरोध के कर पड़ल संकट प्राण ॥
सकल मूर्ति दिमान कहलक 'सुनिअ बलिसुत देव ।
आय की पछताए अओर बिलम न मुग सेव' ।
एहि उत्तर भानु शम हुनि हरि सुदर्शन लेल ।
बाण भुज सभ खण्डि कारन दुइ भुज लखि देल ॥
"अ क छल मोहि व हु-कण्डति छुटल न सम आज ।
भाबि से प्रभु भल चाहए तकर की मन लाज" ॥
एहि उत्तर बाणकी भेल परम तत्त्वक ज्ञान ।
जोरि करपुट कहल हुरिसँ कएल मानस ध्यान ॥३५॥

देवगिरा हरि स्तोति पर्व ... —

जय तारकराभारहारमोहारकारण ।
संसारसारकंसारे देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३६॥
वृष्णिवंशावतंसाय वसुबाहो दयानिधे ।
त्रिविधाकारकुरुकार्यसंपादेव नमोस्तु ते ॥३७॥
प्रह्लादाह्लादलोलाक्षमर्मोपामोहित विश्वकृत् ।
भक्तिभेदद भूतेश देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३८॥
कर्ता हर्ता च पाताषि विश्वस्य बहुलाभुक् ।
अज्ञानतमसेनरस्य देवदेव नमोस्तु ते ॥३९॥
अबोधमन्दधेमेन वरदानविधायकम् ।
स्व-माया कारणान्तत्र देवदेव नमोस्तु ते ॥३९॥
बुद्धभकण, कृतनयो वरदाने विव पुर ।
अबोचदस्वरवद् बुद्ध्या दयस्व नमोस्तु ते ॥३२॥
मगव दोल सर्वाऽय कृता च हृदस्तया समम् ।
मायावलस्य तो मग्या देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३३॥

नथ मन्मुखा केपि भवतामपि माधव ।
का वन वर्णन कोऽपि देवदेव नमोस्तु ते ॥३४॥

अर्थेन स्तुत्साह ते कृत्वा धिक । जीवनाम्मरणमेव वर तथैव विचेरम ।
नो चे शतादिशमर्थेन तथा पुर कावस्था मम पूर्वं, वीर एवमुक्ति विमुख
बहुशाकोप एव मनोय । अतः पर किं राज्यादिकम् । भवत्प्रीतये सर्वं मया
तृणमदापि मन्यता बाहुनाम यथादायि तथैव । किञ्च मद् बुद्धिमुंबन्धनया
पाणिपीडनमिव्यति महद् भाग्यम् । तत्कुलमजानता मया तेन युद्धमकारि
तत्फलमेवेतदभूत । मम दोषमगणयन्नबन्धो कृपासिन्धो दयां कुर्वति
मामकी भूयसी प्रार्थनेति किं बहुना" ।

अथ बाणासुरस्तुत्यादि निमग्नाबन्धुबन्धु कृपासिन्धु श्रीकृष्ण उत्तरमाह
प्रथम पद्येन । यथा—

काले जाग्रत एव अन्तुरखिलः कालोऽवति प्रायशः,
कालो नाशकरो हि कालवशगो वृष्टश्च कालात्मकम् ।
काल कोऽपि काल एव कदति (?) श्रेयस्स तस्य श्रय,
कोऽहं सम्पुरतोऽसुराधिप भवे दुर्मतिता मामकी ॥३५॥

यथा —

इत्थं राज्य रामचन्द्रस्य भविता सर्वसम्मतम् ।
स्वस्तस्मोसया गार्गी कान्तारे तन्निदर्शनम् ॥३६॥
पञ्चवानामहम्मिष्य चित्रं भूरि पराभवः ।
द्रौपदी च सर्वसमता तत्रैव मुनिदर्शनम् ॥३७॥
एवमादि शापस्य काल एवात्र कारणम् ।
तमिस्रायमवाहु तथापि निगदाम्यहम् ॥३८॥
भवितव्य भवत्येव नाभवत्य भवति क्वचित् ।
नाहेयि त्व दा चपिमुनिवाक्येऽसुराधिप ॥३९॥
यदि भक्त, पुरारेस्त्व द्वापरोऽत्र न कोऽपि मे ।
आवयोर्न च भेदोऽस्ति किमावयोर्भवेत ॥४०॥

१ – मूयक गए ने प्रकाशित मुद्रानवक ।

विसृज्य सर्वं राज्यादि गच्छ त्वं शिवसन्निधौ ।
तत्र नृत्याधिकरणे वाञ्छासिद्धिर्भविष्यति ॥४१॥
अद्यापि राज्य चेन्मह्यं गृह्णामि प्रीतये तव ।
ददामि चाहं कस्मैचित्पर्युत्सो यथा दृढौ ॥४२॥
उपानिदृढयोः कृत्वा वृष्ट्वा कम्बुलमालिकाम् ।
गच्छामि द्वारकां वृत्तं विनिमस्तेऽस्तु यत्किंचम् ॥४३॥

इति श्रीरत्नत्रयाभिधसंविरचितायामुपहरणमालिकायां युद्धपर्यन्तमाद्य-प्रकरणं समाप्तम् ।

★ ★

अथ बाणासुरः सप्ताङ्गं सकलराज्यं मित्रकलत्रविचित्रवित्तसौधादि-सौख्यं पुरीरक्षकं मत्वा शिवान्तिकं गन्तुमुत्सुकोऽभवत् ।

अथ भूतभावनमुखमना सत्वविराग आशुतोष भूतनाथ शंकरमभि-लक्षीकृत्य बाणासुरो वदति । अत्र दोहा :—

छतक व्यथा अति विकल मन, विकट सरूप निहारि ।
अब की आएब मोर[1] शिव, की हम देखब नारि ॥४४॥
शिव - पद सेवल जन्म भरि, तस फल अभ सुख भेल ।
चरक समय मन विधिक बस, कीदृह मति भए गेल ॥४५॥
अपन अवस्था देखि अभ, बाणासुर तजि देल ।
छलभङ्गुर तनु देखि मन, हर - दर्शन - मति भेल ॥४६॥
अब धरि अमरण - शरण शिव, फेरि आएब सुत पास ।
करब अराधन तत्पर हृदय, पूरब वासक आस ॥४७॥

अथ परं कैलासे शिवसन्निधिं गत्वा यथोक्तरूपं शिवं पश्यन् स्तौति पद्यैः—

भुजङ्गवरमेखलं, स्फटिकचारुभूभृत्त्विषं
शुचीन्दुसमभ्रादलं जटिलमिन्दुचूडं भजाम ।

१ कोठा ।

त्रिशूलिनमजं त्रिभुं प्रणवकल्पमुल्लासिनं
दिगम्बरमहं भजे कमपि कामदं तत्पदम् ॥४७॥
यदीयसुदृशस्कृपा यदि हि जातु वा जायते
धनोऽपि धनदायते विधिरिशकामायते ।
अजापि बुधायते विगतदुष्कशाजायतेऽ-
चलोऽपि लघुपायते तमिह विश्वबन्धुं स्तुवे ॥४८॥
सूरी न भवतः परो जगति कोऽपि भूतेश भो
निरङ्कुश इहानुभाविव एव कृत्याविधिः ।
तत्रैव निजकर्मणो यदि हि भोस्य एवं फलं
किमत्र परिमा तव प्रणतभव्यदोहं शिशुः ॥४९॥
अचिन्तित मनसा सुरस्त्वविनदो न शक्तिर्मया
कदापि शिशुनाधुना विपदि यामि वस्यान्तिकम् ।
भवन्निपरस्य वे वमपि दोषदृष्टिः कदा
किमस्य भक्तिर्विधो तदिति नैव जाने गतिः ॥५०॥
सरस्य सुरभिन्नतः सपदि संपदः सन्तु वा
नवावरगता अपि प्रमयनाय नेहेतराम् ।
परन्तु भवतोऽनिश कुशलधाम नाम स्तुतं
प्रशस्तु दिवसानि मे जपत एव सायुज्यदम् ॥५१॥
विहाय विल कायं सकलु सत्पथ मे मनो
मनोजनिकमाकये विधातु मायुसन्धर्धने ।
नमज्जनिवारणे सकलकारणे कारणे
भवन्पदयुगे सदा भवतु नाथ नाथाम्यहम् ॥५२॥
यदीयचरणाम्बुजं मनसि चिन्तय वेगा जगत्
समस्यवति कञ्चनो वजनवाचको माधवः ।
कथं न भजसे मनो निखिलकामदं दुर्मते
भवेयमहमध्वरस्तदिवमर्थयन्नादिधाह् ॥५३॥
विधहि विपदम्बुधौ सरलमुपमन्ने शिला-
घनन्यनाशिके वया भवनदुष्टकर्मोन्मूले ।

भवन्तमनुचिन्त्य यज्जगति लब्धकामा मे के
विधिप्रचरितं जना। स्वपदि भूरिसत्त्वालयाः ॥५१॥
हराहु हर मे त्वया स्वकृतशोपशामद्भुता
महाजिनसदासन प्रमथनाथ नेदस्तुते ।
विपत्रिचयसागरे पतत इन्दुभाल प्रभो
कुरुष्व करुणामये विलसनो निजां बुद्धिकाम् ॥५२॥

इति बाणासुरकृतं शिवस्तोत्रम्। अतः परं बाणासुर पारिजातिक-महेशवाण्या कृपया कृष्णाकरं शंकरं प्रार्थयति ।—

(महेशवाणी)

शिव मोर करिअ उपाने।
अपह अथवा हम सभए न पारिअ संकट पइल पराने ॥
नाहि वाहि शिव तोहि शिभाओल आब होएत वरदाने।
लखन भेलहुँ मायावश अभिमत याचल आनक आने ॥
नकर उचित फल आए तुलाएल जेहन कएल अभिमाने ॥
दूत मान बाहु अरहि काटल गेल नहि तोषी लखयाने[1] ।
सभ तेजि धाए आए तुअ परिसर धए मन आस बिधाने।
देखिअ नाथ हर्ष हर हेरिअ हरिअ दोष - सन्ताने ॥
देखि नाथ हर सभ दुख फेरल कएल गणक परधाने ।
रत्नवाणि भन वरद एक शिव जगत-विदित-यश-गाने ॥५६॥

अपरञ्च गीतम्। छादोत्तरम् :-

आज कारण विकल बलिसुत गेल शंकर - तीर ।
छलहुँ के हम भेलहुँ की अब कहए नहि रह धीर ॥
लखन बलिसुत कएल गोचर अछि कर - पुट माथ ।
विकल भए तुअ पास अएलन्हि सदय हेरिअ नाथ ॥
देखि गोचर लखन शंकर देल अभिमत दान ।
छूटि सभ दुख भेल आस सुख रहा देव समान ॥

१ – कृष्ण ।

तेजि राज समाज सुत बिसे भेल शम्भुक दास ।
देखि शुभ गति प्रथम गण वर शम्भु पूरल आस ॥
रत्नवाणि भन हि मन भग असत अब अभिमान ।
बाण भूपति तम्हिक दुर्गति एहन भेल निदान ॥६७॥

इति बाणासुरवरदानम्।

अथ। परं बाणासुरराजस्य सभीप्सान्तरिक्षादागत्य कलिविचारदो नारदो जयाशीर्भिरभिवृद्ध्य वरिवस्यावसरं कंसप्रसङ्गं सपरिवारं श्रीकृष्णं प्रत्युज्जगाद पद्येन :

कृष्ण त्वं प्रभ्य धन्यस्त्वमसि हि जगतां स्वस्तम। कोऽपि नास्य
कर्ता हर्ता च भर्ता कलिमवहृतनु काव्यतो वीर्यवर्य ।
आशीर्वादः मदीयः नृमनुपरिचयात्स्वस्य एवोऽपराधो
बाल्याल्लब्धप्रसन्नप्रमलभजलयाद् गीतकीर्तेऽन्दु तोऽसि ॥५३॥
एक एवास्यनर्थस्य वैनतेयसहायवान् ।
किं पुनर्बलिमद्रेन प्रद्युम्नेन विजेष्यते ॥५४॥
एष बाणासुरो मन्त्री बीभत्सुमवाप्तवान् ।
शम्भोर्माया न मायन्ते विज्ञप्तिरिति भूयसी ॥५५॥

अथाह परं कृष्ण उत्तरमाह :—

किमेतं वदसि देवर्षे विरञ्चिकुलसम्भव ।
कृपा मः सावकी नस्या मामकी भक्तिरात्मा ॥५६॥
कुम्भजाशेन मुनिना सिन्धुः पीतस्तपस्विना ।
विश्वामित्रेण कोपेन सृष्टिरेव कृतापरा ॥५७॥

अथ भावया कृष्ण आह गीतम् :—

देखब कखन मदन-सुत आलि ।
उडि नहि सकिअ बिना मुनि पाखि ॥
बिनु दर्शन नहि मानस धीर ।
बनक समारिअ लोचन नीर ॥

बुझलन्हि बाण हमहिं एक बूत ।
भेलइन्हि तकर अमोरथ पूर ॥
देखिअ आए तोरित अनिरुद्ध ।
तखन सकल सभ जानव बुद्ध ॥
अनुपम देवपुरी निरमाण ।
शोभइ द्वारका कएलक बाण ॥
रत्नपालि भन भन अनुराग ।
कृष्ण सराहल बालक भाग ॥२६॥

अथोत्तरं नारद आह । अत्र दोहा :—

ते किछु बाचल असुर जन से सभ आए तैयार ।
कहल कृष्णपद भए रहब, निश्चित सभक विचार ॥२६॥
कृष्ण सदय मन बूझि सभ, कएलक हरिपद-कञ्ज ।
दोल कृतारथ सकल जन, मेटल जत हिअ-रञ्ज ॥४७॥
तखन कहल मुनि कृष्णहो सुनिअ देव चित लाए ।
भन बध कार्त्तिक भजत पद, समकाँ रहिअ सहाय ॥४८॥
धर्म्म कर्म्म अति निरतमन, बाणासुरक विमान ।
निज पद-सेवक जानि हरि, हिनक करिअ सम्मान ॥४९॥
करए चलल अनिरुद्धबध, हाथ गहल तखनहि ।
तखन विमान बुझाए सभ, देखन्हि तसु बल टारि ॥५०॥
बालक एक मर्म्म अ-बुति, कतविध कएलन्हि जङ्ग ।
कुल शील सभ बूझिकहु, करब उचित रति-रङ्ग ॥५१॥
एहन चरित तस बूझि मन, उपजल अति सन्तोष ।
मुनि-सम्मत तसु राज्य दए, कएल बहुत परितोष ॥५२॥
कर-पुट सम्पुट जोड़िकहु, गोचर कएल विमान ।
दोलहुँ कृतारथ पुण्यबल, पाए भूप सम्मान ॥५३॥

भावया गीतेनामात्यः कृष्णं स्तौति :—

कृपादृष्टिसँ हेरल नाथ । न पुनल रिपुजन कएल सनाथ ॥
लङ्का जाए कएल हरिकाज । दशमुख मारि विभीषन राज ॥
वंश हनल हसितहिँ शिशुनाथ । उग्रसेन यशोलन्हि पुनु राज ॥
परशुराम तनु लेल अवतार । कि कहब महिमा अगम अपार ॥
ति क्षत्रिय कए लेलन्हि राज । से पुनु आएल कश्यप काज ॥
तेहन कृष्ण मोहि आब सहाय । हरलन्हि सकल विपति चित लाए ॥
रत्नपालि भन भाग बड़ भाग । भनक बध जानब भगवान ॥२६॥

दोहा :—

सपरिवार वसुदेवसुत, सभ मिलि कएल पयान ।
पाशबद्ध अनिरुद्ध तत, उपगत श्रीभगवान ॥५४॥

छन्दोत्तरसाहु तदन्तः :—

कृष्ण-समागम रवि-सुत[1] बहि । हर्षक लेल पड़ए नहि मुहि ॥
कएल प्रणाम सभक मन लाए । लज्जावश किछु कहलो न जाए ॥
जनिक सुमरि पद अनलहु काम । से प्रभु आए बचाओल प्राण ॥
की भेल दान कएल गेल नाथ । कृष्ण सहाय बरद भिक भाग ॥
कतेक विपति केवल प्रह्लाद । विष होअ अमृत जनिक परसाद ॥
भन बध कार्त्तिक हरि भज लोक । से जग पावन पाव न शोक ॥
कि कहब हेरब अब हरि आहि । कएल पराभव उपगत ताहि ॥
रत्नपालि भन मन कए थीर । भजत तकर हायहि पयुकीर ॥४०॥

अथानिरुद्धः सुगिरा श्रीकृष्णं स्तौति गद्येन :—

[illegible]

1—अनिरुद्ध ।

कोदण्डबाणमण्डल सुरगण्डन, विप्रचरित, शम्भुमित्र मित्रवांशुविधु-लोचन, दुःखमोचन, जिनविरोचन, भक्तशोचन देवदेव, देवकीवसुदेवसुत, भूदेव, दारिद्र्यविद्रावण शमितरावण, समुपनिर्गतरूपधारण, नागपाशा-वरुद्धानिरुद्धबन्धविध्वंसकान्धमायान्धकारापहारक नमस्ते नमस्ते नमस्ते"। इत्यनिरुद्धकृत स्तोत्रमाकर्ण्य नारदमुवाच श्रीकृष्ण :— किमिदमयमधुना मुने।" मुनिराह "देव राक्षोक्तवेष्टितानुगा समाकृष्यानिरुद्ध न पाणिपीडनसंपादन विधेयम्"। तथैवोषा समागत्य श्रीकृष्ण स्तौति भाषया :—

की हम कहब कतेक मोर ज्ञान। अबला अलप वयस की जान॥
युग युग लागि धरथि कत ध्यान। दरशन सपथ करथि अनुमान॥
पुण्य पुराकृत[1] उपजल भेल। परम पुरुष मोहि दरशन देल॥
भेलहुँ कृतारथ तव विधि आज। [2]जगत जनक तह किंकरक लाज॥
कि कहब महिमा अगम अपार। अनिक ज्योति थिक जगत पसार॥
रत्नपाणि भन मन अनुसारि। अनुखन नन मन भजिअ मुरारि॥४१॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणासुरान्तःपुरे चारद्वारा "श्रीकृष्णेन बाणासुरस्य भुज-द्वयोनसहस्रभुजदण्डखण्डन सकलबलसमजयाकारि, तदुत्तर राज्याय सर्वा-मुन्मुच्य बाणासुरः प्राणमात्रावशेष कृतदाप आशुतोष त्रिनेत्रमृत्युयाचिनि" निशम्याशानियातमिवाकलय्य पट्टमहिष्यादिकारसर्वा विश्य, कोदृश्य स्थिता-स्तदा कोदृश्योऽभवन्निति तदस्य आह पद्याभ्याम्। यथा :

सकलागमधीरा वलितपटीरा अनुपमचीरा मलिनवसना
निजयलभदोषादपगतरोषा विगलितकोपादिकनिचया।
अवगतधवयाना निखिलनिधाना लसदभिमाना अपि सदया:
सुपमाकविगीता अभयरभीता जनतानीता गतविनया ॥४६॥
किञ्च,

अनुराधिपदारा विगलितहारा, विगतविहारा, जातशुचः
सकलादितनारा परिहृतसारा, लोचनधारा हीनरुचः।

१ -पूर्वकृत। २—संसारक पिता मी।

तुच्छकनाशा देवतनाशा, विपदुरपाशा मुग्धहृदः
स्वयमीकृतवासा, विगतविलासा बन्दुरवासा, नीतिविदः ॥४७॥

ततो बाणस्य पट्टमहिष्यादिका अपि पुरजनाश्च स्त्रियोऽपसरणा वयमिनिगस्य ज-दारजारक-कृष्णानुसरणमेव विधेयम्। ततस्ता अपि सर्वा अगत्वा एव कृष्णाभिमुखमागत्य समागत्य ता श्रीकृष्ण प्रत्युचुः पद्यैः —

कृष्ण कृष्ण महाबाहो त्राहि त्राहि दयानिधे।
अनाथनाथ नाथास्मदनाथा वयमागता ॥४८॥
किङ्करं इति जानीहि पुनीहि कृपया विभो।
स्वर्वीकतारिगर्वोऽसि सर्वप्राण नमोस्तु ते ॥४९॥
उषायाऽदोषया सार्धं पाणिपीडन-मङ्गलम्।
तस्मुर्ध्वीधहि सर्विधे विधेरत्र विधानतः ॥५०॥

किञ्च, गीतं भाषया ता वदन्ति :—

[1]जखन सुनल बाणासुरभुज भव-खण्डन कएल मुरारि।
तखन अधार लाग मोहि सभ दिश पनि बिनु अगति बिचारि॥
नयन नयल तुअ तत्त्व-विवेचन देखल जग हरि एक।
मायावश भम राग बेआपित कि कहब तत्त्व विवेक॥
ब्रह्मादिक सुर सकल तिरस्कृत मन तुअ मायावश लोक।
करनहि कृपा प्रभावधि नत पु भ, नहि पए छूटए शोक॥
जनन मरण देह शोक नियत जग सुख दुख अनियत जानि।
कोरअ कृपा तुअ पद-युग-सेवन की विधि लोचन चानि॥
रत्नपाणि भन सुनिअ मुदित मन तेहि पूरए जन आश।
हरि पद-कमल विमलमति भाविअ लखन ककर जग त्रास ॥५२॥

अत [illegible] बाणासुरमहिषीचरित श्रीकृष्ण प्रति वदन्तिस्म। भाषया गीतम्

१— बाणासुरक परोक्षात्मक उक्ति। २—बाणक मन्त्री।

बाणासुरक 'धनिह महिषी' सिअ अमरबाला जनि पाए ।
तखन सुमत मन तुअ पद धिअन पुण्य पुराकृत पाए ॥
राजपाट जत तकर समीहा सभ हिनि तेजल आज ।
भेलिहि वृत्तारथ तुअ पद देखितहि बहुलहि के बिक लाज ॥
कएए धनिक तुअ देश दिगम्बर कतए द्वारका धाम ।
तखन आत्र हरि दरशन देलहि पूरित भेल मनकाम ॥
अपन कर्म फल सभ जग भोगए शुनहि तरह नहि आन ।
शोणितपुर गति पाए धरिअ गति छाएलहि गए शिवध्यान ॥
रत्नपाणि भन सुनिअ सकल जन अतिशय जीवन जानि ।
प्रतिभाशालिन बुत्त ध । जन वलिअ भाविअ सारङ्गपाणि[४] ॥४३॥

अथ प्रस्तावे स्तुत्या पुनरपि श्रीकर्णं प्रार्थयति पद्यत्रयेण :—

कृष्ण त्वं त्राहि नाथ त्रिभुवनविजयी दुष्टगर्वापहारी
बाणस्य मात्यामुद्धया न परिहर हरे त्वद्गतं मे सदाकृत् ।
आर्यं बाणात्मजाया कुजनुरथ भवन्तत्मार्य्या भवेया
स्वस्तुष्टं कृपा वा भवसि गमनति का हि वक्तु तवीत ॥ ४४ ॥
कर्ता हर्ता च गोत्रा भवसि च जगतामेक एवेति सत्यम
प्राय क्रमेभेदाज्जगति बहुगुणैर्ह्लादयोरयमदात् ।
देवा सर्वा अदेवा स्मृतिनिचयविदः के न कुर्वन्ति सर्व्यं
तदपि भ्रान्ता अहन्त पदकमलयुग नाथ नौमि प्रमीद ॥४५॥

अथातः पर कृष्णोत्तरम् :— हे बाणासुरामात्य एव ममानिमित्तमसि मया-
बोधि" । तत कृष्ण आह नारद' पति — 'हे मुने अत पर धन्यादानकर्त्तो
नो भविष्यतीति" निशम्य मुनिराह हे कृष्ण ! बाणासुरामात्य एव तत्कृ-
स्वान्तर्गतमहिषीमात्रत्वाच्च" । 'अत्र क पुरोधा.' । उत्तर, "विर-
ञ्चिरय स्मरणीय' । मुने स्मरते समाजगाम सः । अथ विवाहोत्सवे
सति अप्सरोगणाश्चमत्कारयन्ति तन्नृत्त पश्यन्तीव जगु । आदौ विघ्नतिवा-
रकस्याहिनायकस्य मङ्गलश्लोकः । यथा—

१—पटरानी स्त्री । ४—सरल विशिष्ट । ५—[illegible] ।

"जय शुभ ! क वन्द विनायक सुरवर-नायक देवनुते
जय हर बालक सज्जन-पालक मलिमय माल-कलाधिपते ।
जय भय-भञ्जन सरमुनि-रञ्जन रिपुवय गञ्जन भञ्जुमते
जय भव कारक दनुज-विदारक निज-जन-तारक विश्वपते ॥४३॥

अथ दुर्गतिनाशकत्वाद दुर्गास्तुतिं भाषया :—

कर कर मङ्गल देवि भवानी । तुअ पद-पद्म गिरिज[१] वरदानी ॥
तोहि धनि जननि एक सब जाने । पूरत मनोरथ के पुनु आने ॥
संकट विकट मेटए तुअ नामे । विबुध सेवि तोहि पूरित कामे ॥
दशविध मा सदो परिनामे दुर्गति- नाशिनि दुर्गा नामे ॥
तुअ महिमा अग के कह देवा । पूरित मनोरथ तुअ पदसेवा ॥
रत्नपाणि, भन मन अवधारी । वन्दित रहित गिरि-राज-कुमारी ॥४४॥

अतः परं वराकरणसमये कस्यामेकस्यामग्रणमरवपूरित पल्लवाच्छभमुख
कान्तिस्त्री शिरसि निधाय गायनीभिर्बहुवनिताभिस्सह स्कन्दन कर्तुं
वराश्वमारुह्य प्रस्थानम् । वर उत्थाय गति सम्भवे तदघटमध्ये पुगफलादि
राजादि दत्वा प्रोक्षणम् । अत वरचलनमारभ्य कन्यादानावि-
पर्यन्तस्य गीतमय भाषया, तस्य 'पडिछना' ति नामावधेयम् ।—

कलस एक जल-पूरित रे, लए चलु थए आगे ।
[illegible] चलए गाइ रे, पहुँचए वर पाछे ॥
[illegible] शिरसी रे, दीपटा गइ लाई ।
[illegible] शुभ शुभ कए रे, गावए शुभदायी ॥
पौरिअ [illegible] धूमिअ रे, वर आव मुहाने ।
पहिरथि [illegible] पट पीअर रे पुलकित मन कामे ॥
[illegible] रे, मण्डप विच आई ।
[illegible] वर आए रे, कन्यागृह धाई ॥
[illegible] वर रे, सुमङ्गल [illegible] गीते ।
[illegible] रे, कि कहब तनु पीते ।

१—विवाहक [illegible] । [illegible] महादेव ।

कन्यादान लेल वर रे, शुभ वेद विधाने ।
तखन होम विधि बोधित रे, अनतए परधाने ॥
रत्नपाणि भन मन पुनि रे, आशिष सुखकारी ।
दुलहि दुलह भेल समुचित रे, जोबथु युग चारी ॥४८॥

अनन्तरञ्च । पहिञ्जनीति नामकं छन्दम् :—

निरखि वर सब गुनक आगर, पुरल सबहिक आस रे ।
जनिक रूप अनूप सम कह, चन्द्रमक जनु हार रे ॥
धन्य से विधि जनिक सिरजल, जबधि रचि परकाश रे ।
हृदय मणिमय हार शोभित, कान कुण्डल भास रे ॥
वचन मधुमय सबक मानस, नयन कञ्ज विकास रे ।
मदन तम अनुरूप राजित, शील सिन्धु विलास रे ॥
कंसदोसन—वंस अवतंस, सहज रूप तरास रे ।
सकल नीति विचार कोविद, लेल सुरतब बास रे ॥
जनिक दरशन सहज मन होअ बिनए युग सह बास रे ।
दुलहि समुचित जखन सब गुण दुलह मन तनु बास रे ।
रत्नपाणिक प्रेम दिन दिन, बाढ़ हो न हरास रे ॥४९॥

अथ जाते विवाहे श्रीकृष्णो नारदमाह ।—"मुने अतः परं द्वारकागमनमुचित-मिति मन्मानसे प्रतिभाति, परन्तु भवताप्येवा विचार" । ततो मुनिराह पद्येन :—

सिद्धो मनोरथो मेऽद्य सिद्धस्तेऽखिलसाहसः ।
चतुर्थीकर्म सम्पाद्य गन्तव्यं द्वारकां प्रति ॥६४॥
बाणस्त्रीप्रभृतीनाञ्च गीतानि विविधानि च ।
श्रोतव्यानि महाबाहो सर्वमोदकराणि च ॥६५॥

इति नारदवचः श्रुत्वा कृष्णोऽप्याह तथास्त्विति । ततो बाणस्य महिषी महा-हर्षमुपागता । अथावसरलाभे बाणासुरमहिषी पुनः श्रीकृष्णं प्रार्थयति पद्येन ।—

का माता जनकः सुतादिरपि किं राज्यं धनं वा सुखम्
कस्यान्ते च सहायता मुररिपो कस्यापि नो जायते ।
मोक्षः कस्तव दर्शनादृते इह त्वत्पादकञ्जार्च्चना
ध्याने मूर्त्तिरियं यथा हि पुरतः सैवेह मुक्तिश्चती ॥६६॥
किञ्च,

द्रष्टुं त्वच्चरणारविन्दयुगलं कुर्वन्ति भूयस्तपो
ब्रह्माद्या मुनयोऽपि ये बहुयुगे पश्यन्ति तेऽपि क्वचित् ।
भाग्यालोचनगोचरो यदुमणे तद्भागधेयोदित
विज्ञप्तिं कलये मृजामि चरणे पश्यामि तेऽङ्घ्रिद्वयम् ॥६७॥

अथैवं बाणासुरमहिषीप्रार्थनामिशम्य दयासागरो यदुनागरो मुरारिराह—

त्वं भक्तासि च मे देवि विभक्ता न मदालयात् ।
भविष्यति मदीया ते नेयमा मूर्त्तिरन्यथा ॥६८॥
बाणासुरस्य भार्य्या त्वं यदि राज्याभिरक्षया ।
तदा वासस्य ते देवि समीहैव नियामिका ॥६९॥

अथेदन्निशम्य निवृत्ततर्षाभिहर्षाऽभयाशया बाणमहिषी श्रीवासुदेवं आह गीतेन भाषया ।

भेलहुँ कृतारथ तुअ पद देखि । सब विघेवन भेल विशेखि ॥
गोचर हमर भूमिअ सजराज । एहन विचार होइछ मन आज ॥
तुअ पद-युगल-कमल जिव दास । करए हृदय तेहि पूरए आस ॥
आन न भाव असुरजन-धाम । तुअ पुर जाए पुरत सब काम ॥
रत्नपाणि भन मनक विचार । हरि दरशन फेरि करए विकार ॥७०॥

इति मङ्गौलीसं० श्रीरत्नपाणिकर्म्मविरचितायामुषाहरणनाटिकायां बाण-महिषीवरदानपर्व्वणि द्वितीयः प्रकरणम् ।

★

(३)

अथ मुक्तसाम्राज्यि[illegible] त्रिविधे तीर्थे [illegible] सर्वं दिनमु-
[illegible] चतुर्थीवर्मणि [illegible] श्रीकृष्णो नारद प्रत्युज्जगाद
"मुनेऽत्र [illegible] समये द्वारकां प्रति सङ्कल्पयात्रा विधेया, तथाज्ञा
[illegible] भवता भवादेशः"। उत्तरमाह [illegible] नारदः—"हे कृष्णेश्वर भाव-
[illegible] श्रीकृष्ण [illegible] तथाज्ञैव सकलमङ्गलकारिणी।
भवतु तावदोयोग यद्यपि साम्प्रतम् तत"। इति निशम्य तत्रस्थाः सर्वे
एव जनाः कृष्णादेशवशा मोदमानाः परस्परमुद्योगकृत्यकुः। पद्येन आह
[illegible]:

शिबिकाश्च समायाता नानाकारा मनोहराः।
अन्यान्यपि च यानानि विविधानि समाययुः ॥७०॥
मत्तमातङ्गयुक्ता हि पर्वता इव पर्वताः।
कुर्वन्तो धराधारं गर्जन्त इव वारिदाः ॥७२॥
अश्वा भृत्यादिवाहिता नानादेश—समुद्भवाः।
धारागतिविदस्सर्वे गमने तु मनोजवाः ॥७३॥
[illegible] हि भटादयः।
अमुना मनुजाकाराः कृष्णाङ्घ्रिकमलानुगाः ॥७३॥
वदन्तो द्वारकां सर्वे कदा द्रक्ष्यामहे वयम्।
धन्योऽयं बालपुत्रोऽपि यत्प्रसादेन सत्वरम् ॥७४॥
कृष्णानुसरणन्मोऽङ्गमोक्षोऽपि लभ्यते यतः।
श्रेयां कृष्णे वैरिणाः किमभाग्यमतः परम् ॥७५॥
नानारोहणस्याय समये समुपागता।
अप्सराश्चित्रलेखा या कृष्णं स्तौति मृणा गिरा ॥७६॥

अथ गीतं भाषया :—

"अशरण शरण कृष्ण तुअ चरण। से बुलि हमहु शरण अनुसरण ॥
ब्रह्मादिक सेवनि निज दीन। अनितर भक्ति सपन असु लीन ॥

* — [illegible] ।

सुनिअ निवेदन मन दए नाथ। कहब उचित सभ करब न लाथ ॥
ऊषा सखी हमर अति प्राण। सपन विकल कहु कोन मति जाण ॥
तखन गेलहुँ हम सिन्धुक तीर। देखि नारद मानस भेल धीर ॥
तामसि विद्या देल मुनि मोहि। तखन हरक तुअ सपता जोहि ॥
एह एक सङ्कर कारण भेल। बाण हिमवत भए शिव-सट गेल ॥
तकरो हेतु ऊषा बरदान। तसु फल भए गेल एतेक निदान ॥
सेवक चरित जगत के जान। एक तुअ विदित किछु भगवान ॥
दीनबन्धु न करिअ मन रोष। अहिँक कएल सभ की मोर दोष ॥
करुणावरुणालय तुअ नाम। के जग आन पुरत मन—काम ॥
जाएब हमहु दोआरका देश। तकर कृपा कए करिअ निदेश ॥
रत्नपालि मन मन गुनि आज। पुरब मनोरथ श्रीब्रजराज ॥४०॥

अथैतदुत्तरं कृष्ण आह। अत्र दोहा :—

अकर अहब कृत तहन से, जग पावए फल लोक।
ताहि हमर की सबक धनि, कि करह मानस शोक ॥५५॥
करह विमल मन अप्सरा, तखन चलह मोहि सङ्ग।
जे भेल से भेल समय-वश, की अब तसु अनुषङ्ग ॥५६॥
युग युग जे सुर असुर जन, कएलन्हि मोहि तह गर्व्व।
तकर कर्कर नहि कएल हम, कए तसु छए बल सर्व्व ॥५७॥
बाणासुर हर वरब लहि हुनि बाहुल अनिरुद्ध।
तकर कोप हम प्रकट कए, कएल हुनक सभ शुद्ध ॥५८॥
चलओ रहओ सभ अपन रुचि, मोहि कहि शत्रुक भाव।
देल राज्य हम सुमन भए, देखि दिमान स्वभाव ॥५९॥
रतिपति-सुत-लिअ हुकुम लहि, चलहु उचित सम्मान।
कएल क्षमा तुअ दोष सभ, चेतस न कह मलान ॥६०॥

इति कथोक्त निशम्य श्रीकृष्ण प्रणम्य समोदा श्रीमदुषान्तिक जगाम। अथेतरसमय एव कुम्भाण्डदुहिता रत्नकाया रामा श्रीमदुषासहचरी समागत्य श्रीकृष्ण स्तौति गीतेन भाषया :—

कि कहुय हम कृष्णक परभेद । के बुझ आन वेद नहि वेद ॥
पहिलहि धएल मीन अवतार । तखन कएल वेदक उद्धार ॥
कच्छप तनु हरि अहिखन भेल । पीठ उपर धरणी धए देल ॥
शूकर-रूप जखन हरि भेल । धरणी रद[1] पर निज सम लेल ॥
नरहरि-तनु भए देव मुरारि । हिरण्यकशिपु तनु देल विदारि ॥
वामन रूप धएल हरि जखन । बलिहि पठाओल फणिगृह तखन ॥
परशुराम-तनु हरि धए लेल । निःक्षत्री पृथिवी भए देल ॥
दशरथ-सुत सीतापति राम । दशमुख-नाशन विदित भेल नाम ॥
जखन कृष्ण नवजलद रूप । यमुनाकर्षण कएल अनूप ॥
जखन धएल हरि बुद्ध शरीर । दयामयालय अमुदित गीर ॥
जखन भेल हरि कल्किक देह । नहि राखल जग म्लेच्छक रेह ॥
दशविध तनु कएलन्हि नत काज । तखन भेल छथि श्री व्रजराज ॥
शिशुक अवस्था कत हम कहब । देव चरित सभ सुनितहिं हरब ॥
कि कहब महिमा अगम अपार । कृष्ण-रूप ब्रह्मक अवतार ॥
करुणाकर करुणा किछु करिअ । अबला बूझि न य मम हरिअ ॥
मानल रहए मोहि तुअ पद ध्यान । से वर दाओ सदय भगवान ॥४६

इति रामाया गीतस्तुतिप्रकाश्य श्रीकृष्ण उत्तर अगाद । तत्र दोहा

रामा तुअ मन भक्ति लखि, भेल मोहि परितोष ।
तुअ वाञ्छित वर देल हम कएल क्षमा सभ दोष ॥६१॥
शबरी जातिक नीच अति, की तनु मदसद्ज्ञान ।
भेलि परमपद भक्ति तह, मोहि नहि जाति विज्ञान ॥६२॥
प्रभुरपदा जनि पाए कहु, भक्त विभीषण भेल
लङ्कापति चिरजीविन, मुक्त जनक सुख देल ॥६३॥
[2]अविद भाव मोहि जे भजत हमहु भजिअ पुनु ताहि ।
हमर सुदर्शन भक्त-जन, रक्षा करए सराहि ॥६४॥
ममता वश भेल जगत भरि, के कर भक्तिक थीर ।
करए चेत नहि जाए कहु ककर करब भए कीर ॥६५॥

१—दांत पर । २—निश्चल ।

अथ श्रीराधानन्दिनाम्नः समारं तुच्छीकृतवती तत्वज्ञानवती रामा द्वारकां विना मान्यत्र [illegible] निपाय सोपाधिकमुज्जगाम । तत्रो [illegible] आह हे कृष्ण वो वा विलम्ब मङ्गलपाठाममयोऽप्रमनोव सुदर ।" कृष्णोऽप्याह "मुने शवदुक्तं युक्तं प्रतिभाति तहि वाक्पुत्री [illegible] सुत्रिणी मा भवतु । परन्तु विघ्ननिवारकस्वात गणेशस्तवराज दुर्गनिवारकत्वाद दुर्गास्तवञ्च पठित्वा शिविकामारुह्याग्रे व्रजतु । भवतुगास्त-मात्रा [illegible] सस्तमहस्वरूपेण पश्चात्तु ॥ ततो गत्वा मुनिरपां प्रति अपाठेद यत्, श्रुतवेद यत्तो सा श्रीगणेशस्तवस्वरूपगीतपाठारम्भमुच्चकार । पाठो यथा :—

जय करि-वदन मदन-रिपु-बालक नत-पालक सुरबन्धो
रवि-शशि-दहन-नयन कवि-शेखर सन्तत-करुणा-सिन्धो ।
मणिगण-जटित-मुकुट-कुण्डल-युग-मण्डितमेकरदन्तम्
अङ्कुश कल्पलता-रद-पाशधरं प्रणमामि हसन्तम् ॥७०॥
बीजपूर-पूरित-सुण्डस्थल सुण्डा-दण्ड-जितारे
अरुण-तरुण-सिन्दूर-विभूषित यज्ञ-गुणोदित-हारे ।
जय मूष-ध्वज विदित-चतुर्भुज हार-वलित शशिहीनम्
मामनुगतमव भवकारागृह लंकर तारक दीनम् ॥७१॥
मुनिमुद्रामुद्रितजनमोहर लम्बोदर वर-गीते
निगमानिकरपञ्जरशुकमोदक वलितरताक्षयनीते ।
विघ्न-तमस-तरण मुनि-मानस-मानस सरो-मराले
मम मतिरस्तु परे महति त्वयि सन्ततमपि युगपाले ॥७२॥
सुरगण-मौलि-जात-किण-मण्डमपि तव पदपङ्कजमीडे
माहि चपलमिह मामनुगतमपि कालु-भुजग-मुखनीडे ।
रत्नपाणि-कलितं वसुपदमिह पठति समर्चनकाले
स्तवमनुपाति स यो गणपति-पदमुत्तमभक्तिविशाले ॥७३॥

ततो दुर्गाकवच पठति स्म :—

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥७४॥

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
प्रामलेनात्मशूलस्य जल-स्थाप्रमेश्वरि ॥८२॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि ते रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥८३॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः ॥८४॥

ततः पुरोहितादिभिर्व्वाक्षतं ओ आकल्पमिति मन्त्रेणादायि । गुरुपत्नीभिर्द्विजातिनीराजना श्रीमधुना शिविकामारुरोह । मङ्गलध्वनौ प्रवर्त्तमाने गीतनृत्यादयुत्सवे च वन्दिप्रभृतिकर्तृकस्तुतिपाठेषु ।

"शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराभवः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥"

इत्यादि शकुनमन्त्रादिक पठत्सु ब्राह्मणेषु पुरतः शिवनवासकारावयो जयमुच्चरत्सु औदाचारमना चलिता । तत्पश्चाद्ध्वतेयारूढाः श्रीकृष्णबलभद्रप्रद्युम्नानिरुद्धाः प्रयाताः । ततो बाणासुरो लब्धराज्यः सपरिवारो जगाम । ततस्तत्पुर्य्यां कुमभवदित्याह भाषागीतेन तटस्थः—

क्यो नहि रहल नगर भेल शून । सुमरि सुमरि सभ कृष्णक गुन ॥
सुत वित गृह कोन आओत काज । चलिअ द्वारका कि करब लाज ॥
[1]योषित पुरुष केओ नहि रहल । कृष्ण - वियोग सभक मन हरल ॥
देखब द्वारका कृष्णक धाम । जिबितहिं पुरत स्वर्ग-सुख काम ॥
पशु प्राणी जत सभ चलि भेल । कृष्ण दयामय सब कए लेल ॥
देखि वरिआम गरो भेल छबुध । सबहिक लोचन शोभा सुबुध ॥
जतए समीहा[2] कृष्णक चित्त । तहिखन से सभ होइछ बत्त ॥
कृष्णागमन गबइ लए चारि । एखन अनल देखिअ अवधारि ॥
रत्नपाणि भन न करु विचार । कृष्णक रचन सकल संसार ॥

१—नारी । २—इच्छा ।

इति मणीली सं०—जोतेश्वरान्वय श्रीरत्नपाणिशर्म्म प्रणीतायामुषाहरणनाटिकायां श्रीकृष्ण द्वारकायाप्रवर्त्तन तृतीय प्रकरणम् ॥

●

(४)

कृष्णागमनावधि द्वारकायां सर्व्व जनाः कीदृशा अभवन्नित्याह [1]तटस्थो भाषागीतेन —

रतिसत हरण वेआकुल सभ जन, दोसर कृष्ण वियोग ।
निखदिन मीन भवन नहि भावए, सभ हेजल जत भोग ॥
देवकि अ दि विकल भल सन्तत, जल बिनु मीनक प्राण ।
कोन दिन आबि देअथ यदुनन्दन, तन्हि बिनु के कर त्राण ॥
शोणितपुर पुर बहु योजन, बलिसुत तनए नरेश ।
रतिसुत हेतु करथ गए सङ्कर, के जन कहत उदेश ॥
कृष्ण परोजय कतहु न सूनल, मानस नहि रह थीर ।
लाख समारिअ रहए न धैरज, सरसित[2] लोचन नीर ॥
गणक बजाए सगुन जन बूझिअ, आओब कखन मुरारि ।
दिन बिनु भानु द्वारका हरि बिनु, देखिअ सबहु विचारि ॥
रत्नपाणि भन सुनिअ सगुन जन, न करिअ मानस खेद ।
पहुँचन आज कृष्ण सभ मिलिकहु, से जानब मन वेद ॥२१॥

अत परं तुर्यी स्वीति यादवा सङ्गमस्यात् सुरगिरा गीतेन । गीत यथा :—

जय जयेदाविलासकारिणि प्रणतजनभयभारहारिणि,
सजलजलदवरकृपधारिणि पतितताराणि हे ।
तत्पदुरिनिवारसारा निजसमीहितकामचारा,
कृतसमीकृतधरणिभारा जगदपारा हे ॥

१—उदासीन, सामान्य पात्र । २—सलिल, अश्रु ।

दिग्तरीकृतशैलवंशा गमनतज्जितराजहंसा,
वेदवृन्दकृतप्रशंसा शमितकंसा हे ।
निर्गुणासि गुणौघशालिनि समरजितरिपुमुण्डमालिनि
सकलसुरमुनिमनुजपालिनि मोहजालिनि हे ॥

विन्ध्यपर्वतकृतनिवासा पूरितालिलयादनाशा,
कामरूपकृतैकपाशा सर्वदासा हे ।
त्वमसि मातः सिद्धिदात्री भक्तकामवरप्रदात्री,
वैरिमारणकालरात्री भवविधात्री हे ॥

त्वमसि भवसकलाभिरामा त्वत्कृपालिलसिद्धकामा,
देहि वरमिह गिरिसवामा प्रकृतिरामा हे ।
किञ्चिदन्यविहेविनेहे (?) सदा वस मिथिलेशगेहे,
जनकि मिथुं तिथुभविदेहे दिव्यदेहे हे ॥५२॥

अथ दुर्गास्तुत्यनन्तरं कञ्चित्कालमतीत्य द्वारकानगरग्रामे सर्वे मता समागत्य स्थिता इति श्रीकृष्णो नारदं मुनिमाह "हे मुने ! किमत्र परं विधेयम्"। मुनिराह "हे कृष्ण सर्वत्र स्थेयम् । द्वारकायां गर्वेण कृता मनसि त्वद्वियोगादतः शान्तिपुरोद्भव यत्र मूढमरीरया निगाढ चारः कदिर्वृचारदृक् पेषणीय । ततो भवद्भ्यां निशम्यानन्दकन्दायितयलेखया सेनासागरा यादवास्सर्वे समागमिष्यन्ति । यथायथं सम्मिलनं विधाय प्रमदप्रवेशं उचित इति मामको विचार"। कृष्ण आह "मुने भवदुक्तं युक्तमेव प्रतिभाति"। अथ द्वारकायां यादवास्सकला विकला कृष्णसन्दर्शनविरहाधिक्लिष्टा गोप्यं उत्कण्ठिता । देवकीवसुदेवस्तु प्राणानुत्सृष्टकामा एव । एतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णप्रेषितश्चारश्च जगाम । तन्दृष्ट्वा सर्वे जगदुः "कस्त्वमत्रागतोसि"। स आह "द्वारकानगरप्रियो सपरिवारः कुशलो विद्यते श्रीकृष्णस्तत्प्रेषितोऽहमत्रागतोस्मि"। इति वार्तां निशम्य हर्षोत्फुल्लहृदयाः सर्वे यादवा अभवन् । पुनस्तेऽपृच्छन् "भो दूत ! बाणासुरपुरे किं कुशलमस्ति वद"। स आह—अथ दोहा :—

[1]बाणासुर पुर जाए कहु, कृष्ण कएल बड़ युद्ध ।
भेल द्विभुज भए राज दए, शिवतट मानस-शुद्ध ॥६६॥
ललि खगपति सभ सुरमगण, कतए किछु भाए गेल ।
हरषित रतिसुत आनि कहु, कृष्ण अनुरुद्ध कए लेल ॥६७॥
नारद मुनिक विचारतह, रतिसुत कएल विवाह ।
विधि विधिबोधित भेल सभ, ऊषा पओलन्हि नाह ॥६८॥
उचित धर्म्म हरि बूझि मन, राजा कएल विमान[2] ।
पुरवासी सभ कृष्ण-मय, कि कहुब सबहक ज्ञान ॥६९॥
अनुरुद्ध चतुर्थी कर्म दश, बीति गेल दिन चारि ।
देखिअ सभ मिलि आए कहु, हरषित जेहन मुरारि ॥७०॥

अथ गीतं भाषया :—

[3]कर्णाकर्णि सुनल सभ लोक । भेल कृतारथ बिसरल शोक ॥
तखन तैयारी नगरक भेल । दोसर द्वारका जनि बनि गेल ॥
चन्दन-चर्चित जगमय सरजि[4] । कुसुम-विभूषित भए गेल धरजि ॥
तनए पताका सभ दिश शोभ । देखइत सुरपतिकाँ होअ लोभ ॥
कि कहब नगरक सभ सुख चरित । विधकर्म्म जनि सिरजल त्वरित ॥
सभ दिसि बाजे सकल जन तखन । कृष्ण-वदन-मुख देखल कखन ॥
गज रथ बाजि पदाति अलेख । [5]रूप देखाएल चलल अशेष ॥
बनि विधि बान तैयारी भेल । देवकि आदि अपन कए लेल ॥
चललि कुमारी सभ नहि काँच । कृष्णक सगुन करब गए आँच ॥
पुनि कएल [illegible] । लए निज चललि तेजि मुरलाज ॥
[illegible] चलल सभ साजि । जगमग चौदिश मणि गण-राजि ॥
[illegible] विविध तनु बजान बाज । बन्दी सुयश गाब शुभ साज ॥
चललि सकल [illegible] । जाए पहुल सभ कृष्णक सोल ॥

१— [illegible] पर हो कृष्णक पठाओल दूतक जनि द्वारकानगरवासीक प्रति ।
२—[illegible], बाणक [illegible] सचिव । ३ कानाकानी । ४ -मार्ग ।
५— [illegible] ।

उचित विहित हरि सभसँ मिलल । बाणासुरक चरित सभ कहल ॥
देवकि प्रभुनि उषा लग गेलि । देखि तसु रूप कुमारय भेलि ॥
उषा कएल भूमिकिस प्रणाम । आसिष भेल पुरओ मनकाम ॥
बाणासुरक देखल निज लाभ । कतहु नहि रातओ पति-क्षोभ ॥
कृतक चरण कएल धनि शरण । देखि द्वारका भए गेल सरण ॥
कृपाल पिय सभकाँ भए गेल । तखन मुरारि हुकुम एहु देल ॥
श्रीवसुदेव चलिअ निज गेह । देखल कन्दन बहुत हिअ नेह ॥

तदनन्तर छायान्तर भाषागीतमाह तटस्थ [१]—

तखन नारद कएल सम्मत, भेल लोक तैयार ।
आगु भए मुनि चलथु सबहिक, अधिक कृष्ण पिआर ॥
ताहि उत्तर अगुन अत छल, आगु से सभ भोल ।
तखन दुइ दल चलल हुरपित, शेष-शिर[२] दबि गेल ॥
धरणि डगमग सिन्धु उछलित, भोल चौदिश शोर ।
मूलिअबला-समुद्र-चन्दिर[३], कृष्ण आगम जोर ।
तखन सभ दल नगर पह चल, सौध-सीमा देखि ।
बाणपुर जन समहु मानल स्वर्गधाम विशेषि ॥
तखन सभ भेल कृष्ण-मन्दिर, जतए जगतक वास ।
एक[४] सौध निवास पओलक, भोल पूरित आस ॥
चन्द्र मन्दिर अति अनन्दित, सपति ऊषा आए ।
ततए देखल देवि दुर्गा, यादवैकसहाय ॥
तखन देवकि आदि कहलन्हि, करिअ देवि प्रणाम ।
रत्नपाणि समारि ऊषा, भेलि अवनति काम ॥७२॥

अथानिरुद्ध सहिता बाणात्मजा यादवकुलवृत्तान्ता-श्रीदुर्गा-प्रणामं करोतिस्म ।

दुर्गा दुर्गतिनाशिनी वसुभुजा या च दवोल्लासिनी
एकाम्येकविलासिनी सुभजटाजटीघरोद्भासिनी ।

१—उदासीन, सामान्य नट । २—शेषनागक फणा ।
३—बाणिदेवाकरी समुद्रक चन्द्र । ४—महल ।

मायामोहमपाहिनी सुरमुना सन्वामिनी वैरिणाम
तां त्वां देवि नमामि नाम शिरसा पत्या महत्यावहात् ॥७५॥

अथाग गीत नूतिग :—

नमन चुमाओल भेल मभवीथि । कि कहब हरष मिलल नवनीधि ॥
दुलहि दुलह त्रिभुवन अभिराम । नगहल आए बएल विश्राम ॥
गीत नाद बीतल दिन चारि । भोलि कुमारय जत छल नारि ॥
भहफाडी समुचित भए गेल । ओरभोर विधि गुरु-मन भेल ॥
कथा-चरित सकल जन देखि । के नहि आशिष देथि विशेषि ॥
तखनि सम्प्रति मभथह पूर । श्रीवृलकृष्ण जगत भरि शूर ॥
सकल मनोरथ पुरि गेल अयन । कृतक मानस भए गेल तखन ॥
करिअ सभा सभ आशीष देथ । ऋषिगण जनिक चरण सभ सेथ ॥
तखन नैआरी सभ आए गेल । धरणि सुधर्मा अति बनि गेल ॥
रत्नपाणि कृत अमृतम चरित । चाहथि कृष्ण होअ से त्वरित ॥७६॥

इति शुभम् ॥

परिशिष्टम्

रत्नपाणिकृतम्

दशमहाविद्या-गीतम्[1]

१--श्रीकालिकायाः (एमन-कल्याण-रागे)

जय जयाखण्डराजरण्ये, चरणचिन्तक जन तारण्ये,
निगम-नुतिमनिजननि धन्ये सदयगण्ये हे ॥
सघनघन रुचि-चिकुरजाले सजल-सन्तत-रणकराले,
त्रिशुकलाकर वसित भाले, रूपशाले हे ॥
दहन रवि विधु नयन शालिनि, सकल सुरमुनि मनुजपालिनि,
कर्ण शव युग भूतजालिनि, मुण्डमालिनि हे ॥
रुधिर - पूरित विकट दशने, वैरिमहिनि गगनवसने,
तरुण - नि शत लम्बिरसने, भीम हसने हे ॥
भव पराभव भार हारिणि, नील तनु रुचि पुञ्ज चारिणि,
चण्डमुण्ड विनाश कारिणि, पतित तारिणि हे ।
अमि शिरोभय वर विभिन्ने, विजित नख रुचिशुचि सहस्रे,
दलित-सुररिपुमदतमिस्रे, प्रणवमिस्रे हे ॥
कटि विराजित सव कराली हर हृदिस्थित गतिमराली,
योगिनीगण वलिनताली दक्षकाली हे ॥
वेदभूज शिव भूरतलोने, साम तनु कुचयुगल पीने,
शिवमयीकृत विविध गीते, जगदधीने हे ॥

---

१ [illegible] प्रकाशन १९१२ ई० में बाबू कलिकेश्वर सिंह द्वारा सम्पादित 'मैथिलभक्ति प्रकाश' नामक गीत संग्रह में रमेश्वर प्रेस, दरभंगासे भेल छल। (पृ० १ सँ १२ एवं १६)।

चिन्तयामि निश्चितवाणी, सरस-कवन कुल विलासा,
निजकरासकलोकलाशा पूरितशा हे ॥
दाहि शिवाशिव दुरित शोषिणि, रुद्रसिंह नृपकलोषिणि,
रत्न [illegible] समाधुनोषिणि, घोरघोषिणि हे ॥

२—श्रीतारायाः (हमनकल्याणरागे)

जय जगत्त्रय गति विधिज्ञे, सघन घन रुचिमन विपज्ञे,
सदयमानस भव विधाज्ञे शोषिचिज्ञे हे ॥
त्वमसि तारिणि परमखर्वा, रणसमीकृत शत्रु गर्वा,
लम्ब कुक्षि समक्ष सर्वा, श्रुति निवर्वा हे ॥
दीपिचर्म मनोज्ञ चीरा, वेदबाहु समग्रधीरा,
मुण्डमालिनि रुग्रगभीरा, जनित नीरा हे ॥
पद्ममुद्रा ललित शाला, भिन्नलोल जटा विशाला,
नाकरविहृत शुचि कराला, शम्भु बाला हे ॥
सर्वदिव विलि मध्यशाला, पद समुन्नत पद विलासा,
पदर कर्तृभरा सुहासा, मञ्जुलासा हे ॥
वामकर सितकल्पमुण्डा दण विनाशित गण्डमुण्डा,
सकल शोधर नित्यखण्डा, कोपदण्डा हे ॥
जगद्व्यापि जलीयधारा, त्वेतपकजपद विहारा,
निखिल सुरमुनि मन्त्रसारा, उग्रनारा हे ॥
रुद्रसिंहनृपानुरञ्जिनि, रत्नपाणि भयौघ भञ्जनि,
विषय रसमीण नैकरञ्जिनि, शत्रु गञ्जनि हे ॥

३—श्रीत्रिपुरसुन्दर्याः (हमनकल्याणरागे)

त्रिपुरसुन्दरि चक्रवासा, कलित बहुविधि भव विलासा,
शतमखादि सुरौघवासा, शोणिताशा हे ॥
विविध भावक रुचि शरीरा, सतत शोभित रक्तचीरा,
भाल राजित विधु पटीरा, शिक्षधीरा हे ॥

सततपूरित - सकलकामे, वेदभजपरमाभिरामे,
त्वमसि नित्याकलयामे, शम्भुवामे हे ॥
वाशतमि धनुरिव हस्ते, सहजदाशित मिमि समस्ते,
सुकृति निज चरणादि शस्ते, अति प्रशस्ते हे ॥
त्वमसि सा जगदेकमाता, त्वत्कपाजनिकृद्विधाता,
हरिहरादि सुकीर्तिमाता जननिपाता हे ॥
त्वमसि जगदाधार रूपा, निजकृपावश देव भूपा,
त्रिविध लोचनमेकरूपा, परमरूपा हे ॥
अयुतबालदिवाकराभा, गीतकीर्तिनिकायशोभा,
सकल जगदभिपचनाभा, विधु नखाभा हे ॥
तन्त्र मन्त्र विधानदीक्षा, त्वमसि सुन्दरि तत्वरीक्षा,
वेदवृन्दपदज्ञशिक्षा, ब्रह्मरीक्षा हे ॥
रुद्रसिंह नृपैकरक्षिणि, निजवशीकृत सकल यक्षिणि
रत्नपाणि सुतैक पक्षिणि, शत्रुभक्षिणि हे ॥

४ - श्रीभुवनेश्वर्याः

बालदिनमणिरुचिरदेहे, शशिकिरीटशुभप्रदे हे,
गुरुकुचे कलंकगेहे जयविदेहे हे ॥
स्मेरमुखि भुवनेशि धन्ये स्थापितखिल-निरयजाये,
भक्तजनवरमुक्तिजन्ये शैलकन्ये हे ॥
अभय-शुभिवरपाशधारिणि, वेदबाहुविलासकारिणि,
भक्त जनभयवृन्द हारिणि, दनुजदारिणि हे ॥
कमलपद गति विजित हंसे कीटमीतनु शमित कंसे,
सकलदेव गणावतंसे, विदितवंशे हे ॥
हरिहरादिक विबुधसर्के, शुभमयी हृत विविध भर्के,
सदय मानस रुद्ररर्के, भवविदर्के हे ॥
भवनिकाया भवसि माया, जातु चित्तगिरीश जाया,
विविध विरचित विश्वकाया, तदनुपाया हे ॥

कुरु कृपां मयि देवि दीने, भक्तिकरवि विधान हीने,
जननि मयि करुणानवीने, तवनि लीने हे ॥
त्वमसि महिषादिभिरपारा, कल्पपादपवद्विहारा,
जयमयी कृत भीति भारा, जगदुदारा हे ॥
रुद्रसिंह नृपैक पालिनि, रत्नपाणि कृतावदालिनि,
भक्त मानस वास शालिनि, मञ्जुभाषिनि हे ॥

५--श्री भैरव्याः

उदितभानु सहस्रबिम्बा, रक्तपट्टपटी सुदम्बा,
भैरवी जयति प्रलम्बा, तवकलम्बा हे ॥
जपवटीमभयञ्च विद्यामपि वरं दधतीनवद्या
रक्तलिप्त - पयोधराद्या विरदाद्या हे ॥
वेद कर वरलोकनेत्रे, रक्तपंकजरुचिविचित्रे,
शिरसि हिमरुचि मुकुट चित्रे, दुःखनत्रे हे ॥
कुन्द सुन्दर दन्तपङ्क्ता, मञ्जुहासा जगदनम्या,
जगत जम्भदलीन शास्ता, शम्भु कान्ता हे ॥
जटित मणि गण पीठ मालें, ज्योतिरोघ महाविशालें,
शत्रु कानन दाव ज्वालें, रणकराले हे ॥
बद्ध कर युग विबुध धनिता पठति नृत्यति हसति ललिता,
यत्पुरो विविधा सुकविता, भूतिविधिता हे ॥
प्रणतजन दुरितापहारिणि, नम्य नम्य भवैक कारिणि,
कमल कोमल चरण चारिणि, शिव विहारिणि हे,
रुद्रसिंह धरैकपालें, कुरु कृपां मयि शम्भवालें,
रत्नपाणि सुताश्रयालें, रत्नमालें हे ॥

६--श्रीछिन्नमस्तायाः

नाकिशिनकजशानुरेषा, योनिरसिपनिरतिविशेषा,
शक्र मानसरति विशेषा, सत्यमेषा हे ॥

तव विलसितनेत्रहस्ते सूर्य्य कोटि रुचि प्रशस्ते,
रणविनाशितरिपुसमस्ते, छिन्नमस्ते हे ॥
हृदि मुण्डाश्रितमुण्डहारा मञ्जसूत्र कृताहिसारा,
भूषणाङ्क नरास्थिमाला विदितसारा हे ॥
मस्तकं परिधारयन्ती, स्वस्य वामकरे लसन्ती,
निजगलासृजमपि पिबन्ती, मद हन्त्री हे ॥
डाकिनी वर्णिनीभिमाना वर्णिनी च विराजमाना,
वामदक्षिणयोस्समाना, रत्नपाना हे ॥
मन्द्रमारितमञ्जुलास्या लेलिहाना मञ्जुहास्या
शाकरादिसुरैर्नमस्या, सत्प्रशंस्या हे ॥
विविधपुष्पचयानुषङ्गा, सज्जितालकशोभितांगा,
भूरिरिक्ति कृताधभंगा, विविध गङ्गा हे ॥
रुद्रसिंहनृपे सहाया जय सदा गिरि जैकमाया,
रत्नपाणिसुतासुराया, जननि माया हे ॥

७--श्रीधूमावत्याः

जयति भगवति काकयाने, देवि धूमावति निधाने,
जगति कलहानुप्रधाने, लम्बमाने हे ॥
मलिन चीर विशालवन्ता सूर्यकक्षपला दुरन्ता,
दुर्मता कलहैकसान्ता, शूलिकान्ता हे ॥
त्वमसि नगरोद्धे गवाची, कृष्णरक्षनिभैकवाची,
चितामयभूमि वासराची, भवविधाची हे ॥
कलदकृत्य भीति भाया, विविधरिपुवनसूर्यदाया,
गिरिसदर्शितकारुहाया, दुःखजाया हे ॥
सत्यशोभितमुक्तकेशा स्वेदपूरितहृत्प्रदेशा,
देवि विहरसि कामदेशा, यशसूरेशा हे ॥
सदा निजवसधनदविता, क्षुधा व्याकुलित स्वचिता,
यदपि सुरमुनि सर्वसत्ता त्वमसि सत्ता हे ॥

त्वत्प्रभावमयो महेशो नैव हरिरपि भक्तमीशो,
जयति कोऽपि सुरोत्तरेशो य. प्रजेशो हे ॥
कुरु दयां मयि जननि दीने रत्नपाणि शिवावधीने,
मैथिलेशवयावधीने, विविधलीने हे ॥

८- श्री बगलाया.

अपि सुधोदधिमणिविकासा; लसति केलीनिधुविलासा
तत्र सिंहासनगतासा; मोहपाशा हे ॥
लसति वसने पीतवर्णे पीतभूषण—वस्तिकर्णे
कामसुन्दरतनुरपर्णे, सर्ववर्णे हे ॥
वैरिणं परिपीडयन्ती मुद्गरस्परिधारयन्ती
स्वच्छदक्षकरे लसन्ती मोहयन्ती हे ॥
वामकरधृतवैरिरसने सततराजित पीतवसने
घृतगदाभृणिशालवशने, मञ्जुहसने हे ॥
कृतदशाकृतिसिद्धिभेदा त्वमसि देवि सतापभेदा
स्मृतिपुराणसमानवेदा, सम्मतखेदा हे ॥
मदनमोहनरूपशाले जननि करुणाभवविशाले
[1]केश नव नव पाश आले, भव्यशाले हे ॥
भवसि मातः सिद्धिविद्या, त्वत्प्रसादजगत्प्रपद्या,
मूकका अपि हृद्यविद्या—स्तदनवद्या हे ॥
देहि देहि वरं वरण्ये, दर्शिहनूपेतिधन्ये,
रत्नपाणिहृदेकगम्ये, भूपकन्ये हे ॥

९ -श्रीमातङ्ग्याः

श्यामवन तनु सिंह याने, सकल सुर मुनिकीनिगाने,
भक्त लम्भव विभवदाने, भवनिधाने हे ॥

१—'हेलि केलि नरणवासुजाले'—इति मूलपाठः ।

अष्टसिद्धि विराजमाने सुरकुनार्चन सन्निधाने,
भाल बालचन्द्र दीप्यमाने, नित्यभाने हे ॥
नेटसङ्कुलामपि दधाना, रत्नसिंहासनशयाना,
पालमालमपि सन्दधाना गीतमाना हे ॥
रत्नभूषण आहृतमा, लोल लोचन विबुध दासा,
यावकोदित पदविकासा, सुप्रकाशा हे ॥
नील नीरज वक्त्रमाया, लसति वीणावदविलासा,
देवि मातङ्गी मलामा, सुदिव वाला हे ॥
कटक वामिन पर्णरक्ता जनसुगस्कदर्शविभक्ता,
सकलसुरमौलिकामुरक्ता, भूरि भक्ता हे ॥
दनुजराक्षस—नागदक्षा, रणकुगाखिल—देवरक्षा,
हेमवर्ण विभक्त पक्षा पीतवक्षा हे ॥
रुद्रगिरिनपे सहाया भव सदा जयवादिमाया,
जनति सूरिपु सामिकाया मदनपाया हे ॥

१०-श्री लक्ष्म्याः (डमन कल्याण रागे)

भाल कपूर्कवि प्रधाना, क्षौमचीर विराजमाना,
पद्म युगमभयस्वधाना, जयनिधाना हे ॥
दन्तिरे वरदाभि धीरा, प्रणवकला मृष्ट नीरा,
स्वीयकरुणस्याम—कीरा सुरगभीरा हे ॥
विश्वचारुनितम्बदेशा, पद्म वासिनि मञ्जुवेशा,
सघन नीरद नीलकेशा लसत्सुरेशा हे ॥
सिन्धुजैरभिषिच्यमाना जलघटैरमृतैरमाना
स्वर्णजैरभिमोदमाना बहुसदाना हे ॥
सिन्धुजाति सकलगीता त्वमसि धरणीजापि सीता
कुलदशाकृतिसङ्गनीता जगदधीता हे ।
अष्टसिद्धिनिधिप्रदात्री कामनाक्षयपूर्णपात्री
स्वीयनिर्मित सकलगात्री, भवविधात्री हे ॥

सत्यवारिधि ललित नोपा, सदा निजवश निजुपयोपा
कर्मनबहुविध भक्त दोपा सततसोपा हे ॥
स्थिरा भव मिथिलेशगेहे किञ्चिदन्यदपीह नेहे,
रत्नपाणिकरपद्मे हे, शंभुदेहे हे ॥

११-श्रीकालीक

जय जगजननि ज्योति तुअ जगभरि, दक्षिण पदयुत नामे ।
अति द्युति पीन पयोधर उन्नत सजल जलद अभिरामे ॥
विकट दशन अति बदन भयानक, पृथुल मंडुल केशा ।
शोणितमय रसना अति लह लह, श्रीकर मस्तक देशा ॥
तीन नयन अति भीम राव तुअ, शव दुइ कुंडल काने ।
शव कर काटि सघन पोती कय, चौदिस कटि परिधाने ॥
मुण्डमाल उर चारि भुजा तुअ, खड्ग मुण्ड दुहु वामे ।
दक्षिण कर वर अभय विराजित, गगन-वसन वसु यामे ॥
शिव-शव रूप धरा तुअ पद युग, सदा वाम लगधाने ।
फेरव रव कर चौदिस शोणित, योगिनिगण परिधाने ॥
रत्नपाणि भन अपरूप तुअ गति, के लखि सक जगमाता ।
मिथिला पतिक मनोरथ दायिनि सचकित हरिहरधाता ॥

टिप्पणी—श्रीकर = चन्द्र । भीमराव = भयानक शब्द । शव = मृतक । गगन-वसन = दिगम्बरि । वसुयामे = आठो पहर । फेरव रव = सियारक शब्द ।

१२-ताराक

लम्ब उदर अति कर्ण भीम तनु, द्वीपि-अजिन कटि देशा ।
अस्थि चारि पट ता बिच खप्पर, बाल भयानक केशा ॥
एक चरण चढ़ अपर चरण लस, से सित पङ्कज वासी ।
अति मृदु हास भास नव यौवन, लखि रुचि शुचि सम भासी ॥
दक्षिण बाहु दुहु खड्ग कर्तृ लस, रिपुशिर उत्पल वामे ।
ऋषि अक्षोभ्य भाल पर शोभित, लह-लह रसन सुठामे ॥

प्रात समय रविबिम्ब त्रिलोचन, दन्तुर रूप विकासे ।
उदित चिता चौदिस लह-लह कर, सतय देखि तुअ त्रासे ॥
पिङ्गल जटा जूट शिर शोभित, वेदबाहु अति भीमा ।
अनुपम चरित लखित सुर नर मुनि, के कहि सक तुअ सीमा ॥
रत्नपाणि भन तुअ पद सेवक, तारिणि सुनु अवधेपे ।
श्रीमिथिलेशक सतत करिअ शुभ, ताहि न करिअ विशेषे ॥

टिप्पणी—कर्ण भीम तनु = भुद्धि वा बड़ीन एवं भयानक देह । द्वीपि अजिन = बघम्बर । अस्थि = नर कंकाल । पट = ऊपर पीठ कए पाड़ल । लस = शोभित, सित = उज्वल । शुचि = प्रचण्ड ग्रीष्म । वेद बाहु = चारि भुजा । भीमा = भयानक ॥

१३-त्रिपुरसुन्दरीक

जय सिसु भानु अयुत तेजोमयि त्रिपुरसुन्दरी देवी ।
तीनि भवन धन्या तोहि सब कह, पुरन्दर सेवी ॥
पतिविधि अतिरत आरत मुनि तनु, बाल कलाकर भाले ।
अरुण वसन विलसित तुअ भगवति, देखि त्रिलोचन बाले ॥
सम सरपास धनुष इक्षु-दण्डक सृणि शोभित कर चारी ।
श्रीयुत चक्र विराजित तुअ पद, कमल भक्त भय हारी ॥
आगम निगम विदित तुअ महिमा, के कहि सक अवधेपी ।
तुअ भय जगत भगत शंकरारिणि, की मत करत विशेषी ॥
रत्नपाणि तुअ चरण सरोरुह, सभक करिअ अभिलाषे ।
मिथिला पतिक सतत कर मङ्गल, कि कहब गोचर लाखे ॥

टिप्पणी—सिसु भानु = बालसूर्य । अयुत = दस करोड़ । पुरन्दर = इन्द्र । अतिरत = सज्जित, रञ्जित । आरत = आरक्त । कलाकर = चन्द्र । त्रिलोचन बाले = शिवक प्रेयसी । सरपास = बाण औ फान्दी । इक्षु-दण्डक = कुशियारक छड़ । सृणि = अंकुश ।

१४—भुवनेशीक

जय भुवनेशि भीतिभय भञ्जनि, भगवति भक्ति देहा ।
श्याम जलद अभिराम चिकुर चय, लसत मल्लि शशि रेहा ॥
उदय समय रवि बिम्ब अरुण छवि, नयन तीनि तुअ भासे ।
तिरभय उदित किरीट विराजित, मुख सुषमा मृदु हासे ॥
वाम उपर कर लसय अभयवर, भीत बीच कर धन्या ।
दहिन वार कर अंकुश तनु नव, पास पास निरि कन्या ॥
भुवुर भवन वृत्तिदल षोडस, ता बिच वसुदल कञ्जे ।
ता बिच बीच उपर तुअ पद मुख, कमल ध्यान रय भञ्जे ॥
तुअ तनु रचन वचन गोचर नहि चकित शम्भु जगदीशा ।
भगत मनोरथदश तुअ तनु जनु वचन देवाशित ईशा ॥
रत्नपाणि भन सुनिय सुमन भय, करुणा कर जगमाता ।
पूरिय मनोरथ श्री मिथिलेशक, तुअ यश भाव निरमाता ॥

टिप्पणी—वाम उपर = बामा भागक उपरका हाथमे अभय ओ निचला हाथमे वरदान । तनु अंग = दहिना भागक निचला हाथ मे । वसुदल = अष्टदल ।

१५ भैरवीक

अयुत उदित रवि रुचिर देह छवि, अरुण पाट पट भासे ।
रिपु सिर निकर माल उर शोभित, दश दिश ज्योति विकासे ॥
रुधिर लेपमय पीन पयोधर, मुख अरविन्द समाने ।
शशधर रत्नमुकुट शिर शोभित, मृदुल हास परधाने ॥
पुस्तक, अक्ष, अक्ष जपमाला, वर कर चारि निधाने ।
निजजन शंकरि, असुर भयंकरि, श्रीभैरवि तुअ ध्याने ॥
विषय विषम रस हृदय वेधिपद, भजत न परत ने जाने ।
भवन भवन तनु उदित सुकृति वसु, से जन भव पर ध्याने ॥

जगत जननि विनती कछु सुनिए, रत्नपाणि भन दासे ।
श्री मिथिलेशक हृदय वास कर, पुरिय तासु सब आसे ॥

टिप्पणी—अयुत = दस हजार । निकर = समूह । शशधर = चन्द्र । निजजन = अपन सेवकक लेल शङ्करी छवि ।

१६—छिन्नमस्ताक

जय जय ज्योति जगत गतिदायिनि, चिकुर चारु रुचि भाले ।
परम असम्भव सम्भव तुअ वस, पीनपयोधर बाले ॥
कमल कोष रविमण्डल ता बिच त्रिविध त्रिकोणक रेखा ।
ता बिच रति विपरीत मनोभव, सुषमा सरित विशेषा ॥
पद आरोपित पद लस ता पर, अरुण भानु शशि रेहा ।
उरस विशाल माल रिपु-मुण्डक, फणि उपवीत सुरेहा ॥
दक्षिण कर करवाल, वामकर, निज शिर अति विकराले ।
लह लह रसन दशन कटरट कर, फूजल केश विशाले ॥
निज गल गलित उपर कय रुधिरक, धार तीन बह धीरे ।
पुनु दुइ योगिनि पियय दुऊ दिश, निज मुख एक सुधीरे ॥
रत्नपाणि निज सेवक जानिए, मानिए देवि निहोरा ।
मिथिलाधिक सतत कर मंगल, मन धर गोचर मोरा ॥

टिप्पणी—मनोभव = कामदेव । पद आरोपित = ताहि त्रिकोण पर चरण शोभैछ । माल रिपुमुण्डक = विशाल छाती पर शत्रु मुण्डक माला । फणि = सापक अनेऊ । करवाल = तरवारि । निजगल = अपन गरदनि सँ बहराइत ॥

१७—धूमावतीक

जय धूमावति जगत विदित गति, श्याम रुच्छ तनु भाले ।
फूजल चिकुर निकर अति लम्बित, तनु जनु छवि अकासे ॥
कलह-प्रेम अनुखन तोहि भगवति, अम्बर मलिन सरीरे ॥
दशन विकट अति विशद विरल गति, स्वेद बहय तनु धीरे ॥
क्षुधित सतत मन रुच्छ त्रिलोचन, कुक्षि सूप सम सोही ।
तरल सुभाव दुसह मन अनुखन बन उद्वेगल मोही ॥

वायस रथ मुख देखि विलोकन, बास बचय समझाने।
कज्जल सुन्दरि अनुपम रुचि परि कज्जल परम भयाने॥
रत्नपाणि भन रहिय मुदित मन, निज सेवक मोहि जानी।
सदा करिय मिथिलेशक मंगल, गोचर सुनिय भवानी॥

टिप्पणी—चिकुर निकर=केशसमूह। स्वेद=घाम। वायस रथ=रथक ऊपर मे कौआ।

१९—बगलामुखीक

जय बगलामुखि अमृत-सिन्धु बिच मणिमण्डप निधिदेवी।
ता बिच रत्नसिंहासन ऊपर, मुख पद लस भयभेदी॥
पीतवसन मुख पीत विभूषण पीत कुसुममय माला।
फूजल चिकुर निकर दुइ लोचन दुखमोचनि हरबाला॥
बाम हाथ रिपुरसन रक्तमय, दहिन गदा अभिरामा।
अनुगत जन जयकारिनि सुररिपु, मदिनि पूरत कामा॥
कुण्डल-लसित गण्डमण्डल युग, चण्डभानु युग जोती।
विपति विदारिनि रिपुमद हारिनि, दन्त विराजित मोती॥
श्री मिथिलेशक कर जय देवी, पूरित कर सभ आसे।
रत्नपाणि गोचर कर भगवति, कर मम हृदय निवासे॥

टिप्पणी—रिपुरसन=शत्रुक जीह। चण्डभानुयुग=दू गोट प्रचण्ड सूर्यक समान ज्योति वाली।

२०—मातंगीक

कीरक सम रुचि श्याम सुतनु लस, मालिक भूषित देहा।
शिशु शशि भाल, माल मुक्तामणि, हासमुखी शुभगेहा॥
निज पद विनत विभव वरदायिनि, तीनि नयन मुख भासे।
सुर मुनि आदि सकल जनसेवित चरण विलित पटवासे॥
कटुक सुवास पान आरत मुख, कर वर राजय वीना।
अष्ट सिद्धि मयि सिद्धि स्वरूपा, मातंगी जय नामे॥

मिथिलापतिक पुरिय अभिलाषा, निज पदनत अवलम्बे।
रत्नपाणि मुख पदयुग सेवक, गोचर कर जगदम्बे॥

टिप्पणी—कीर=सुग्गा। कटुक सुवास=लवंगक सुगन्धियुक्त पान खएला सँ लाल मुँह कएने।

२०—महालक्ष्मीक

जय कमला कमलायत लोचनि, भव भयमोचनि कन्या।
घन रुचि कुच, चामीकर तनुरुचि, चारि भुजा अति धन्या॥
चारु किरीट विराजित मस्तक, धारिनि पाटक चीरे।
लसय वराभय कर दुई दुइ, पद्म युगल तसु धीरे॥
चारि कनक घट भरल सुधा रस, अमरिस गजकर लाए।
बाम दहिन भय सिञ्चित कर मुख, कमल मनोहर जाए॥
मणिगण जटित लसित भूषण तनु, करुणा कर जगमाता।
शंकर किंकर इन्द्र आदि सुर, सेवक जनिक विधाता॥
पंकज आसन परम विकासन, ताहि ऊपर लस देवी।
रत्नपाणि तसु ध्यान मगन मन, श्री मिथिलेशक सेवी॥

टिप्पणी—कमलायत=कमलक पत्तीसनक समान आँखि वाली। घनरुचि=स्तन मेघक समान। चामीकर=सोनाक समान देह। चारु=सुन्दर। लसय=शोभय। वराभय=दुइ हाथ मे वर ओ अभय तथा दुइ हाथ मे दुइ कमल। गज कर=हाथी सूँड मे अमृत भरि बामा ओ दहिना भाग सँ देवीक मुँह मे ढारैत अछि। शंकर किंकर=शिव इन्द्र आदि देवता सेवक छथि।

२१—महासरस्वतीक (राग विहाग)

दनुज दलनि दुर्गे भयहारिणि, जय पूरित मन कामे।
शुम्भ निशुम्भ निसूदनि भगवति, महासरस्वति नामे॥
घनरुचि केश भेष अति शोभित, आनन आनन्द कन्दा।
तीनि नयन छवि अतिहि विराजित, भाल बालतनु चन्दा॥

शूल, खड्ग रथ-अंग, बाण तुअ, दहिन भाग करधारी।
घण्टा, हल, पुनु मुसल, सरासन, बाम भाग कर धारी॥
अनुगत शंकरि, असुर भयंकरि, सारद ससि सम देहा।
वाहन सिंह लसय तुअ अनुपम, निज जन परम सिनेहा॥
रत्नपाणि करपुट कय नावथि, सुनिय देवि मन लाई।
मिथिला पुरके पुरिय मनोरथ, निसदिन रहिय सहाई॥

टिप्पणी—महासरस्वती = शुम्भमर्दिनी दुर्गा। बालतनु = छोट देहवाला।
अनुगत = शरणागतक लेल शंकरी॥

२२—शृंगारक गीत (राग-महलार)

सकल शृंगार सुभग शुभ वेशा, नृपगृहि देवि कएल परवेशा॥
दिन दिन मंगल कारिणि कन्या, सिंह चढ़लि राखए निरिकन्या॥
शारद-चन्दमुखि चय देहा, कृपा विलोकनि भक्त सिनेहा॥
क्षमा करिअ निज जन अपराधे, त्रिभुवन तारिणि शील अगाधे॥
रत्नपाणि कर गोचर आजे, सतत परिय मिथिलेशक काजे॥

२३—आरतीक गीत (राग-हमीर)

शुभ आरति जगदम्ब तिहारी, देखि सगुह गिरिराजकुमारी॥
दीपक दीप पंचमुख धारी, ता मंह घृत कर्पूर सम्हारी॥
नीराजन मन करत विचारी, प्रात समय अतिसय सुखकारी॥
शिव विरञ्चि सनकादि मुरारी, कर आरति तुअ जगत विचारी॥
रत्नपाणि फल चाहत चारी, देहु जननि फल अति शुभकारी॥